गुजरात विद्यापीठ ग्रंथावली --पु० १२६

स्वराज क्या है ?

लेखक
मगनभाई देसाई

अनुवादिका
निर्मला परळीकर

"भारत सरकारकी ओरसे भेंट"

गुजरात विद्यापीठ
अहमदाबाद-१४

प्रकाशकका निवेदन

हमारे देशका संविधान ई. स. १९५० से अमलमें आया। संविधानमें सामान्य आदमियोंके जानने लायक़ क्या है, यह बतानेके लिये इस किताबके प्रकरण अलग अलग लेखके रूपमें श्री मगनभाई देसाईने १९५० में 'लोकजीवन' में लिखे थे। यह किताब उन लेखोंके संग्रहके रूपमें संपादित की गई है।

किताबके रूपमें छापनेके कारण लेखोंको सुधारकर प्रकरण-क्रममें कर दिया है। जहाँ कुछ कमी लगी उसे पूरा कर दिया है। इससे यह किताब एक स्वतंत्र चीज़ हो गई है।

इसकी भाषा और शैली छोटों और बड़ोंको ध्यानमें रखकर सरल रखी गई है। विद्यार्थियोंके लिए भी यह उपयोगी साबित होगी। सामान्य प्रजाको भी इससे संविधानका परिचय होगा।

'स्वराज एटले शुं' का यह हिंदी अनुवाद गूजरातके हिंदी-प्रेमियोंको तो पसंद आयेगा ही, मगर स्वराजका सच्चा स्वरूप समझनेके लिये यह पुस्तक हर राज्यके नागरिकोंके लिए भी उपयोगी सिद्ध होगी।

अनुक्रमणिका

स्वराजकी प्रतिज्ञा ५

खंड १

भारतका नागरिक हक़नामा

१. नागरिकके मूल हक़ ८
२. समानताका अधिकार १०
३. स्वतंत्रताका अधिकार १२
४. व्यक्तिकी रक्षाका अधिकार १४
५. बेगार और गुलामीकी बंदी १६
६. धर्मकी स्वतंत्रताका मूल अधिकार १७
७. शिक्षा और संस्कृतिके अधिकार २०
८. जायदादका अधिकार २२
९. भारतके संविधानकी आत्मा २४
१०. सामाजिक जिम्मेवारी २६

खंड २

सरकारके संविधानकी रूसे फ़र्ज़

११. भारतकी सरकारोंको आज्ञा २९
१२. न्यायका राज्य ३०
१३. ग्राम-पंचायत स्वराज्यकी नींव ३३
१४. कामधंधे और शिक्षाका अधिकार ३६
१५. स्वराज्य यानी राष्ट्रकुटुम्ब भाव ३९
१६. लोक-कल्याणके लिये स्वराज्य ४०
१७. गृहोद्योग और ग्रामोद्योग ४२
१८. एक ही तरहका दीवानी क़ानून ४५
१९. लाजमी प्राथमिक शिक्षा ४६
२०. पिछड़ी जातियोंकी रक्षा ४८
२१. मद्य-निषेध ५०
२२. खेती और गोपालन ५४
२३. प्राचीन वस्तुओंकी रक्षा ५७
२४. अलग अदालती विभाग ५९
२५. आंतरराष्ट्रीय व्यवहार ६०
उपसंहार ६३

१

स्वराजकी प्रतिज्ञा

हमारे राष्ट्रपिता गांधीजी सूत्रभाषामें कहा करते थे सच्चा स्वराज ही रामराज है। रामराजमें समानता

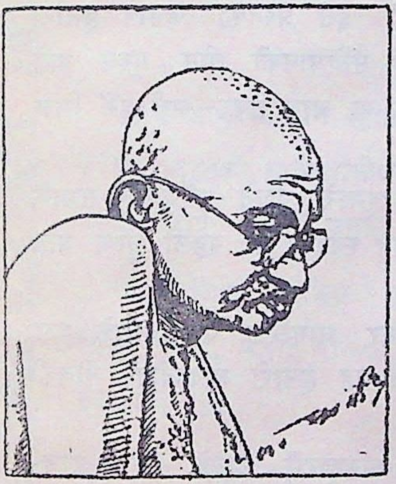

होगी, दयाधर्म होगा, न्याय होगा। सब स्वतंत्रता-पूर्वक अपने अपने धर्म और कर्तव्यका पालन स्वेच्छासे करते होंगे। सब एक दूसरेके सुखसे सुखी और दुःखसे दुःखी होंगे। इस तरह सब अपने अपने जीवनका विकास करते होंगे।

और राजा या राजकर्ता राम जैसा एक वचनी, सत्यप्रेमी और धर्मनिष्ठ तथा त्यागी होगा। उसका राज्य न्यायका राज्य होगा। वह अपनी प्रजाके सुखसे सुखी और दुःखसे दुःखी होगा; वह मानता होगा कि प्रजाका दास या सेवक बननेमें ही वह राजपदका अधिकारी है।

हमारे देशके संविधानमें इसका विचार करके कि स्वराजका क्या मतलब हो सकता है, उसे क़ानूनी ढंगसे शब्दोंमें प्रकट किया है। राजाशाही पद्धतिमें राजा अलग व्यक्ति रहता है; मगर प्रजासत्ताक राज्यमें वह अलग नहीं रहता। इसमें राजा या राजकर्त्ता प्रजासे अलग

नहीं होता; प्रजा खुद ही अपनी सरकार बनाती है और उसीके द्वारा अपना कारोबार चलाती है। इसके लिए वह अपना संविधान बनाती है।

"स्वराज क्या है?" इस प्रश्नका जवाब हमारा संविधान ही कहा जायगा। संविधानकी तीन मुख्य बातें देखी जायें तो उनसे स्वराज या आज़ादीका अर्थ हमें मिल जायेगा।

संविधानके प्रारंभमें हमारे देशने संविधान सभाके सामने जो प्रतिज्ञा की है वह स्वराजकी पहली मुख्य बात समझनी चाहिये।

उसको ध्यानमें रखकर नागरिक या प्रजाके कुछ मूल हक़ तय किये गये हैं। यह हमारी आज़ादीकी नींवकी दूसरी बात है।

और इस प्रतिज्ञाको व्यवहारमें लानेके लिए राज-संस्थाको कुछ फर्ज़ अदा करने चाहिये; एक ख़ास निश्चित राजनीति अख्तियार करनी चाहिये। भारतकी सब राज्य सरकारोंको संविधानने इस बारेमें खास आदेश या आज्ञायें दी हैं। हिंद-स्वराज कैसा होगा, यह बतानेवाली यह तीसरी मुख्य बात है।

इस तरह स्वराज क्या है—इसका मतलब समझनेके लिए नीचे दी हुई तीन बातें हम संविधानमें से देखेंगे:

(१) स्वराजकी प्रतिज्ञा; (२) नागरिकके मूल हक़; और (३) सरकारोंके संविधानके अनुसार फ़र्ज़।

पहली बात इसके बादकी बातोंके सारांश या प्रस्तावना जैसी ही है। वह प्रतिज्ञा इस तरह है:—

भारतका गणराज्य

२६ जनवरी १९५०

हम भारतके लोग प्रतिज्ञापूर्वक संकल्प करते हैं कि भारतको सर्वसत्ताधीश लोकशाही गणराज्य बनाया जाये; और उसके सब नागरिकोंको—

सामाजिक, आर्थिक और राजकीय न्याय मिले; विचार, वाणी, मान्यता, धर्म और उपासनाकी स्वतंत्रता रहे;

दर्जे और अवसरकी समानता रहे;

और हरएकका गौरव और राष्ट्रका ऐक्य क़ायम रहे ऐसी बंधुता प्राप्त हो;—

इसके लिए हम अपनी संविधान सभामें यह घोषित करके इस संविधानको स्वीकार करते हैं; इसको क़ानून बनाते हैं और इस क़ानूनको हम अपने आपको अर्पण करते हैं।

खंड १

भारतका नागरिक हक़नामा

१

नागरिकके मूल हक़

स्वतंत्र देश या स्वराजका ख़ास एक लक्षण यह है कि, उसके नागरिकको कुछ मूल हक़ प्राप्त होते हैं। इन हक़ोंको सरकार भी छीन नहीं सकती। इसलिए सरकार या विधान सभा ऐसा एक भी काम नहीं कर सकती जिससे इन मूल अधिकारोंको धक्का पहुँचे। धक्का लगता दिखाई दे तो कोई भी नागरिक अदालतमें जाकर न्याय मांग सकता है। यदि वह काम या क़ानून अदालतको नागरिकके मूल अधिकारोंको धक्का पहुँचानेवाला दिखाई दे तो अपने आप ही वह काम या क़ानून रद्द हो जाता है, यानी कोई विधान सभा या सरकारी सत्ता इन मूल हक़ोंके खिलाफ़ कुछ नहीं कर सकती। इसलिए ये मूल अधिकार प्रजाकी स्वतंत्रताकी ढाल माने जाते हैं।

ये मूल अधिकार हरएक नागरिककी स्वतंत्रता बनाये रखने और उसके साथ साथ सारे समाज या प्रजाका कल्याण करनेके लिए हैं। इसलिए जहाँ उनका दुरुपयोग होता दिखाई दे वहाँ राजसत्ता इन हक़ोंकी ज़रूरी-मर्यादा निश्चित करती है। इस तरह नागरिक और प्रजा दोनों

उनसे अच्छी तरहसे लाभ उठा कर अपना काम कर सकते हैं ।

ये मूल अधिकार भारतके संविधानमें तय किये गये हैं और इनमें बताया गया है कि इन अधिकारोंके खिलाफ़ या इनकी उपेक्षा करनेवाला कोई भी पुराना क़ायदा-क़ानून, जहाँ तक इन अधिकारोंका सवाल है, अपने आप रद्द हो जाता है । और भविष्यके लिए कहा गया है कि संविधानमें दिये हुए मूल अधिकारोंको रद्द करे या उनमें कमी करे ऐसा कोई भी क़ानून न बनाया जाय; और यदि बनाया जायेगा तो वह रद्द होगा ।

ये मूल अधिकार हमारे देशके संविधानमें इन विभागोंमें बाँटे गये हैं : —

(१) समानताका अधिकार,

(२) स्वतंत्रताका अधिकार,

(३) शोषणके विरुद्ध अधिकार,

(४) धर्म-स्वातंत्र्यका अधिकार,

(५) संस्कृति और शिक्षाका अधिकार

(६) मिलकियतका अधिकार

(७) संविधानके अनुसार कार्रवाई करनेका हक़

इन सात विभागोंमें संविधानने नागरिकको अनेक प्रकारके मूल अधिकार दिये हैं । इन्हें अब हम क्रमशः देखेंगे ।

२

समानताका अधिकार

भारतके संविधानमें नागरिकके मूल अधिकारोंमें पहला समानताका अधिकार है। संविधानकी धारा १४ से १८ में यह अधिकार बताया गया है।

न्यायी राजाका सबसे पहला लक्षण यह है कि उसके राजदरबारमें सब प्रजाजन या नागरिक समान माने जायें; क़ानूनके सामने सब समान होने चाहिये। धारा १४ से समानताका अधिकार प्राप्त होता है। तफ़सीलसे विचार करने पर यह धारा बताती है कि,

(१) आदमीके धर्म, जात-पात, लिंग, जन्मस्थान या इनमें से किसी भी कारणसे राज, नागरिक नागरिकके बीच भेदभाव नहीं रखेगा।

(२) सार्वजनिक उन्नतिके लिए बनाये गये आम साधन, मनोरंजनके स्थान, धर्मशाला, घाट, कुएँ, तालाव, रास्ते, दुकान, होटल वग़ैराका उपयोग करनेमें किसीको भी रुकावट नहीं होगी।

इतना ज़रूर है कि स्त्रियों और बच्चोंके लिए या हरिजन, आदिवासी वग़ैरह पिछड़ी जातियोंके लिए कुछ खास सहुलियतोंकी राजको ज़रूरत मालूम हो तो वह सहूलत दे सकता है; और भेदभाव किया गया है, ऐसा नहीं माना जायेगा।

(३) सरकारी नौकरी या किसी पद पर नियुक्तिके बारेमें भी कहा गया है कि सब नागरिकोंको समान मौक़ा मिलेगा। धर्म, जाति, लिंग, कुल, वंश या इसी तरहके किसी भी कारणसे किसीको नौकरीके लिए अयोग्य नहीं माना जायगा; या किसीके साथ भेदभाव नहीं रखा जायेगा।

इसमें एक अपवाद रखा गया है और वह यह कि ऐसा लगे कि नागरिकोंका कोई पिछड़ा हुआ वर्ग पूरे प्रमाणमें नौकरियोंमें नहीं आता तो उस वर्गके लिए कुछ फ़ीसदी नौकरियाँ ख़ास तौर पर अलग रखनेमें बाधा नहीं होगी।

(४) हमारे देशमें सबसे बड़ी और भयंकर असमानता अस्पृश्यतासे हुई है। संविधान कहता है कि अस्पृश्यता नाबूद की जाती है। जो कोई उसका आग्रह रखेगा वह गुनहगार समझा जायेगा और सज़ाका पात्र होगा।

(५) ख़िताबोंसे अंग्रेज़ सरकारने एक प्रकारकी ग़लत असमानता पैदा की थी। संविधान कहता है कि राज किसीको भी खिताब नहीं देगा, और न कोई परदेशी-राज्यका कोई खिताब ले सकेगा।

फौज़ी दर्जा या शिक्षाकी पदवियाँ, ख़िताबमें नहीं गिनी जायेंगी, इसलिए उनका उपयोग होता रहेगा।

संक्षेपमें कहें तो सबकी समानता बनाये रखनेके लिए ये अधिकार दिये गये हैं।

भारतका संविधान यह स्पष्ट करता है कि दक्षिण आफ़्रिकाकी तरह हमारे देशमें काले-गोरेका वर्णभेद नहीं

किया जायेगा; ऐसा भेद पैदा करनेवाला क़ानून, क़ानून ही नहीं समझा जायेगा। भारतमें धर्मके मुताबिक़ भी भेदभाव नहीं रखा जा सकेगा। राज्यकी नज़रमें हिंदू, मुसलमान, सिक्ख, पारसी, यहूदी ईसाई सब समान हैं। यह बात इतनी बड़ी है कि धर्म-स्वातंत्र्यका अधिकार देनेके लिए अलग ख़ास धाराएँ रखी गई हैं। क्रमशः अब उनको हम देखेंगे।

३

स्वतंत्रताका अधिकार

समानताकी तरह ही आदमीको स्वतंत्रता भी बहुत प्यारी है। आज़ादीके लिए आदमी कुछ भी भोग देनेको तैयार रहता है; कुछ भी सहन करता है; किसी भी मुसीबतके लिए तैयार हो जाता है। अपने देशकी आज़ादीके लिए हमने तरह तरहकी मुसीबतें झेली हैं। क्या नहीं सहन किया? इसका कारण है—जीवमात्रको आज़ाद रहना पसंद है। इसके सिवा आदमी तो अपनी तरक़्क़ी कर ही नहीं सकता। इसलिए देश आज़ाद हुआ इसका मतलब यह कि अब हरएकको अपने विकासके लिए छूट और स्वतंत्रता मिलेगी। लोकशाही पद्धतिमें सबको समान गिना जाये इतना ही नहीं बल्कि सबको व्यक्तिके तौर पर समान छूट भी मिलनी चाहिये। और इसमें सरकार भी हस्तक्षेप नहीं कर सकती। इसलिए भारतके संविधानमें स्पष्ट कहा है कि,

सबको अपने विचार लिख कर या कह कर प्रकट करनेकी छूट है ।

शांतिसे और शस्त्र रखे बिना सभा करनेकी छूट है ।

मंडल या समिति बनानेकी छूट है ।

भारतमें कहीं भी घूमने, फिरनेकी तथा रहने और बसनेकी छूट है ।

जायदाद पैदा करने, रखने; और उसे बेचनेकी हरएकको छूट है ।

कोई सा धंधा या कामकाज करनेकी छूट है ।

सार्वजनिक हितकी दृष्टिसे और दूसरेके वाजबी अधिकारोंके रक्षणको खयालमें रखकर इस स्वतंत्रता पर जो मर्यादा होनी चाहिये वही मर्यादायें रखी जा सकेंगी; और नहीं ।

इस तरह हरएक नागरिकको अपने विचार प्रकट करनेके लिए लिखने या बोलने या छापनेको, किसी भी बातके लिए सभा करनेकी, किसी भी प्रकारका मंडल या समिति बनानेकी, देशमें कहीं भी रहने या जो ठीक लगे वह कामधंधा करनेकी छूट भारतका संविधान क़ानूनी अधिकारके तौर पर देता है ।

४

व्यक्तिकी रक्षाका अधिकार

क़ानूनकी नज़रमें सब समान होने चाहिये। दूसरी बात यह कि क़ानूनके मुताबिक़ बरतनेवालोंको, इस मर्यादाको स्वीकार करनेके बाद, पूरी स्वतंत्रता मिलनी चाहिये।

इसके सिवा एक बात और है और वह है सरकारी सत्ताके नागरिक पर हाथ उठानेके बारेमें। किसीको भी किसी भी तरहसे पकड़ सकते हैं या सता सकते हैं, यह नहीं हो सकता। हरएक नागरिकको इस बारेमें रक्षण मिलना चाहिये। इस बातको संविधानने मूल अधिकारोंमें रखा है। उस धाराका सार हम देखें:

किसी आदमीकी जान या उसकी निजी स्वतंत्रता पर क़ानूनके आधार पर बनी हुई नीति-रीतिके अनुसार ही हाथ डाला जा सकेगा। इसके सिवा इस अधिकारको नहीं छीना जा सकता।

गुनाह करेगा उसको ही क़ायदेके अनुसार सज़ा हो सकती है। गुनाह हुआ हो, तब जो क़ायदा अमलमें हो, उसके भंग होनेके सिवा किसी भी गुनाहके लिए सज़ा नहीं हो सकती। मतलब यह कि, घटना हो जानेके बाद क़ानून बनाकर आदमीको गुनहगार समझकर सज़ा नहीं की जा सकती।

और एक ही गुनाह पर फिरसे मुक़दमा या सज़ा भी नहीं की जा सकेगी।

किसी गुनाहके लिए गुनाहगारको उसके ही विरुद्ध साक्षी बननेके लिए मजबूर नहीं किया जा सकता। मतलब यह

कि गुनाह साबित करनेकी ज़िम्मेवारी जो आरोप लगायगा उसकी होगी ।

गुनाहगारको पकड़कर हवालातमें बन्द कर दिया जाये और उसको अदालतके सामने पेश करके यह न बताया जाये कि किस कारणसे उसे क़ैद किया गया है तो यह ज़ुल्म समझा जायेगा । इसलिए नागरिकके मूल अधिकारोंमें कहा गया है कि, जिसको पकड़ लिया है, उसको जल्दीसे जल्दी पकड़नेके कारण बताये बिना हवालातमें नहीं रखा जायेगा । उसको अपनी इच्छा अनुसार वकील करके अपना बचाव करनेका अधिकार होगा । पकड़नेके २४ घंटे बाद उसको मैजिस्ट्रेटके सामने पेश करना ही चाहिये ।

यह बात तो सामान्य गुनाहके लिए हुई । लेकिन युद्धके समय या राज्यकी हस्ती ही जोखममें पड़ जाय ऐसी हालतमें पकड़नेके लिए ख़ास विचार करना पड़ता है । ऐसे प्रसंग पर गुनाहगारको मैजिस्ट्रेटके सामने पेश करनेकी बात ज़रूरी नहीं । जैसा कि युद्धके समय कोई ऐसा आदमी मिले कि जो शत्रु पक्षका हो, या होनेवाले गुनाहको रोकनेको ज़रूरत हो, ऐसे समय अमुक आदमी गुनाह करेगा इसके सरकारके पास कारण हों तो, ऐसे आदमीको नज़रबन्द करना पड़ता है ।

लेकिन नज़रबन्दीमें रखनेका अधिकार अमर्यादित नहीं हो सकता । इसलिए मर्यादा रखी है कि तीन माहसे ज़्यादा नज़रबन्दीमें न रखा जाय ।

कभी ऐसा भी हो सकता है कि नज़रबन्दीके समयको बढ़ानेकी ज़रूरत हो तो उसका ख़ास क़ानून बनाना चाहिये।

लेकिन क़ायदा बनानेसे पहले हाईकोर्टके न्यायाधीश जैसी लियाक़त रखनेवाले आदमियोंकी एक सलाहकार समिति नियुक्त करनी चाहिये। यह समिति कहे तभी तीन महीनेसे ज़्यादा मुद्दत बढ़ानेका क़ानून किया जा सकता है।

जब अंग्रेज़ी राज्य था तब नज़रबन्द करनेकी सत्ता आंदोलनोंको दबानेके लिए मनमाने ढंगसे काममें लाई जाती थी। इससे हज़ारों लोगोंको इस सत्ताका बड़ा बुरा अनुभव हुआ है। इसके लिए संविधानने जो संरक्षण दिया है उससे बहुत राहत हो गई है।

५

बेगार और ग़ुलामीकी बन्दी

नागरिकको जानकी सलामतीके लिए सरकारकी ओरसे ही भय रहता है यह नहीं है। समाजके दूसरे नागरिकोंकी ओरसे भी भय रहता है, जैसा कि, अमीर और सत्ताधारी ग़रीबोंका दुरुपयोग करें। दुनियामें ऐसा बहुत हुआ है। लोगोंको पकड़कर ग़ुलामके तौर पर बेचते थे। ग़ुलामोंका व्यापार होता था। मालदार लोग ग़रीब लोगोंको बेगारमें बुलाते थे। छोटे बच्चोंको थोड़ी बहुत मज़दूरी देकर सारे दिन काम करवाते थे।

दूसरेकी मज़दूरी या दूसरे पर हाथ डालकर उसका दुरुपयोग करना ऐसी बहुतसी बातें दुनियामें बहुत हुई हैं। इससे भारतके संविधानमें नागरिकको ऐसी बातोंके ख़िलाफ़ रक्षण दिया गया है; और ऐसे शोषणका सामना करनेका

उसे क़ानूनसे अधिकार दिया है। संविधानकी धारा २३, २४ में कहा है—

आदमीका व्यापार करना या किसो भी रूपमें बेगार की मना है। इसका भंग करनेवाला गुनाहगार माना जायेगा और उसको क़ानूनसे सज़ा होगी।

चौदह सालसे नोचेके किसी बच्चेको कारख़ाने या खानमें काम पर नहीं लिया जा सकेगा, या ऐसे ही किसी जोखिमवाले काम पर भा नहीं।

६

धर्मकी स्वतंत्रताका मूल अधिकार

अंग्रेज़ोमें एक कहावत है कि आदमी सिर्फ़ अन्न खाकर ही जिन्दा नहीं रहता; इसके सिवा भी जीवनकी कुछ ज़रूरतें हैं। अच्छी तरहसे ज़िदगी गुज़ारनेके लिए उसको धर्म नीति, प्रेम भक्ति वग़ैरह आध्यात्मिक बातोंकी ख़ुराककी भी आवश्यकता है।

इसलिए सिर्फ़ जानकी रक्षाका हो हक़ काफ़ी नहीं है। उसको अपनी अन्तरात्माके जीवनके बारेमें भी रक्षा मिलनी चाहिये। क्योंकि मनुष्य समाजके इतिहासमें आदमीने आदमी पर धर्मके नाम पर, नीतिके नाम पर, परमेश्वरके नाम पर जुल्म किये हैं। जैसे कि युरोपमें ईसाई संप्रदायोंने आपसमें बहुत ख़ून बहाया था। शुरू शुरूके ईसाइओं पर जुल्म हुआ। पारसी, धर्मकी रक्षाके लिए ईरानसे भारतमें आये। अमेरिकामें रहनेवाले कुछ युरोपवासी भी इसी कारण युरोपसे भाग कर वहाँ गये थे।

दूसरे देशोंकी तुलनामें हमारे देशमें इस बारेमें पहलेसे ही उदारताका बर्ताव रहा है। यहाँ धर्मके नाम पर लड़ाइयाँ नहीं हुईं। धर्मके नाम पर किसीका धर्म पलटवाना हमारी परंपरा नहीं है।

लेकिन आहिस्ते आहिस्ते इसमें फ़र्क़ होता गया है। पिछले कई शतकोंसे इसमें फ़र्क़ होने लगा है; और इससे संविधानमें इसके लिए कुछ स्पष्ट रूपसे कहनेकी ज़रूरत पड़ी है।

संविधान-सभाने संविधानमें कहा है :—

(१) जनव्यवस्था, सदाचार, आरोग्य, और समाजके हितोंका ध्यान रखते हुए सब आदमियोंको अपनी अन्तरात्माकी स्वतंत्रताका हक़ है। और वे स्वतंत्रतासे अपने अपने धर्मका पालन और प्रचार कर सकते हैं।

(२) कोई कहे कि हरिजनोंको मंदिरमें जाने देना या दूसरी सार्वजनिक संस्थाओंका उपयोग करने देना यह हमारी धर्म-स्वतंत्रता पर चोट है, इससे यह स्पष्टता की गई है कि ऐसा कहना ठीक नहीं है। ऐसे अन्यायोंको दूर करनेके लिए राज्य क़ानून बना सकता है।

(३) समाजहितको ध्यानमें रखकर हरएक धर्म अपने अपने धर्म प्रचार और ख़ैरातके लिए संस्था वग़ैरह बना सकता है; और इसके लिए अलग जायदाद रखकर उसकी व्यवस्था कर सकता है।

(४) ऐसा कर जो किसी खास धर्म, पंथ, या संप्रदायके निर्वाह या प्रचारके लिए ख़र्च किया जाता हो, इस तरहका कर देनेके लिए किसीको मजबूर नहीं किया जा सकेगा।

(५) ऐसी शिक्षा संस्थामें, जिसका कि कुल खर्च राज्य उठाता हो धर्मकी शिक्षा नहीं दी जायेगी।

राज्यकी मान्य की हुई या उसकी मददसे चलनेवाली किसी भी शिक्षा संस्थामें अगर धर्मकी शिक्षा दी जाती हो, तो धर्मकी कक्षामें हाज़िर रहनेके लिए विद्यार्थीको मजबूर नहीं किया जा सकता। बच्चे छोटे हों तो इसके लिए उनके संरक्षकोंकी इजाज़त लेनी ज़रूरी है।

हमारे देशमें अनेक धर्म हैं। यहाँ उदारता रखना यही सच्चा धर्म है। और ऐसा ही समझकर सब धर्मवाले चलें यह देखना राज्यका फ़र्ज़ है। उपरकी धारायें इस फ़र्ज़को अदा करनेमें मददगार हैं और

इनमें हरएक नागरिकको उसका धर्म पालन करनेके लिए योग्य स्वतंत्रता भी है।

इस व्यवस्थामें रहे हुए उदार भावको न समझनेसे कितने ही लोग कहते हैं, कि एंसा राज्य तो धर्मरहित राज्य कहा जायगा और यह तो बहुत खराब है। यह नासमझी है। राज्य किसी विशेष धर्मसंप्रदायको न माने बल्कि सबके प्रति समभाव और न्यायी उदार दृष्टि रखे यही धर्मपरायणता है। और यह गुण हरएक राज्यमें होना चाहिये। तब ही वह धर्मपरायण राज्य हो सकता है, नहीं तो राज्यके धर्मान्ध बननेका पूरा पूरा डर है।

७

शिक्षा और संस्कृतिके अधिकार

समाजमें रहना आदमीका स्वभाव है और समाज भी उसको बनाता है। समाज बना कि राज्यव्यवस्था या राजतंत्र शुरू हुआ और उसके ही आधीन आदमी रहता है। इस तरह राजतंत्रमें रहनेवाला आदमी नागरिक बनता है। सिर्फ़ वही आदमी जो क़ुदरती जीवन जी सके नागरिक नहीं बनता। क़ुदरतकी हकूमतमें रहनेवाले, दूसरे प्राणियोंकी तरह, वह भी अपना जीवन क़ुदरती तौर पर बिताता है। लेकिन इस तरह जीना आदमीके नसीबमें नहीं है। दूसरे प्राणियोंसे यही उसका अलगपन है।

इस तरह नागरिक बननेसे दो चार बातोंमें उसको रक्षा मिलती हैं। इसका भरोसा होजानेकी उसे ज़रूरत रहती

है। राजतंत्रको यह विश्वास उसे दिलाना चाहिये। नागरिककी ज़िम्मेवारी और फ़र्ज़ अदा करनेवाला हरएक आदमी, रक्षा पानेका हक़दार हो जाता है।

भारतके संविधानमें इस बारेमें जो मूल अधिकार दिये गये हैं उनमें से चार हम पहले देख चुके हैं। अब शिक्षा और संस्कृतिके बारेमें उसके मूल अधिकार देखें।

महत्त्वके ख्यालसे यह दो चीज़ें धर्म जितनी तो महत्त्वकी नहीं, मगर उससे दूसरे दर्जेकी ज़रूर हैं।

इस बारेमें भारतका संविधान (धारा २९, ३०) नागरिकको यह विश्वास दिलाता है:—

(१) भारतमें रहनेवाले या उसके किसी भी विभागमें रहनेवाले नागरिककी, किसी विभागकी अगर अपनी ख़ास, भाषा लिपि, या संस्कृति हो, तो उसको बनाये रखनेका उसे अधिकार होगा।

(२) धर्म, जाति, जातपात, भाषा या इनमें से किसी भी एक कारणसे किसी भी नागरिकको राज्यकी ओरसे या राज्यकी मददसे चलनेवाली किसी भी शिक्षा संस्थामें प्रवेश पानेके लिए मना नहीं की जा सकती।

(३) धर्म या भाषाके आधार पर बनी हुई सभी लघुमतिओंको अपने ढंगकी शिक्षासंस्थाओंकी स्थापना करनेका अधिकार होगा।

(४) शिक्षा संस्थाओंको मदद देनेके बारेमें राज्य किसी भी संस्थासे इस कारणसे भेद नहीं रख सकेगा कि वह धर्म या भाषाके आधार पर किसी लघुमतीको ओरसे चलाई जा रही है।

इससे यह साफ़ हो जाता है कि हरएक क़ौम या भाषावार समूह अपनी भाषा और जीवनपद्धतिको बनाये रख सकता है; और वह अपने बच्चोंका उसी तरह पालन करना चाहे, तो वह उसी तरहकी शिक्षाका प्रबन्ध कर सकता है। सरकार उसमें कुछ रुकावट नहीं करेगी, और किसीके लिए कोई पक्षपात भी नहीं करेगी।

८

जायदादका अधिकार

जाति, धर्म, संस्कृति और शिक्षाके अलावा हरएक आदमी जायदादकी रक्षा चाहता है। आदमी अपनी जान जितना ही महत्त्व अपनी जायदादको देता है; क्योंकि वही तो उसकी दुनियादारीका आधार है। इसलिए लोग समझते हैं कि जानमालका संरक्षण जिस राज्यमें न मिले वह राज्य नहीं कहा जा सकता।

दूसरी ओरसे जायदादके लिए डर भी उतना ही रहता है। चोर या डाकू उसे उठा ले जाये यह डर तो साफ़ है ही। अन्यायसे दूसरा नागरिक उस पर क़ब्ज़ा न कर ले या उसे हड़प न कर जाये यह डर भी रहता है। राज्यको इन दोनों हालतोंमें बीचमें पड़कर न्याय करना चाहिये और चोर या डाकूको पकड़ना चाहिये।

लेकिन राज्यकी ओरसे भी जायदादका डर रहता है। राजा उसको ले ले या छीन ले। इसलिए भर्तृहरिने तो कहा है कि धनको राजाका डर रहता है।

25977

आज तो मालदार और धनवान लोगोंको यह डर है कि समाजवाद हो गया तो राज्य सब कुछ ले लेगा, उद्योग-धंधे और उनमें लगा हुआ पैसा और ज़मीन जागीरें सरकारकी हो जायेंगी। इस डरसे कितने ही लोग गुप्त रीतसे काम करते हैं।

इससे हरएक नागरिकके इस बारेमें क्या अधिकार हैं इसकी स्पष्टता संविधानमें की गई है। अब ये धारायें देखें।

पहली बात उसमें यह है कि क़ानूनके अधिकारके सिवा किसीकी जायदाद छीनी नहीं जा सकती।

अगर राज्यको किसीकी जायदाद लेनेकी ज़रूरत पड़ी तो उसके लेनेके लिए क़ानून बनाना चाहिये। लेकिन उस क़ायदेमें साफ़ कहना चाहिये, कि उसे लेनेके लिए उसके मालिकको एक निश्चित नियमसे मुआवज़ा मिलेगा। बिना मुआवज़ा किसीकी जायदाद राज्य नहीं ले सकता।

मतलब यह कि भारत राज्यमें हरएकको क़ानूनके मुताबिक़ जायदाद रखनेका हक़ है। अगर राज्यको उसका क़ब्ज़ा लेना पड़े तो उसका योग्य मुआवज़ा देना होगा। राज्यको कर या दंड लेना हो तो वह इसमें नहीं गिना जायेगा या लोगोंके स्वास्थ्यके लिए या जानमालकी रक्षाके लिए राज्यको कुछ करना पड़े तो वह भी इसमें नहीं गिना जायेगा।

१

भारतके संविधानकी आत्मा

भारतका संविधान हरएक नागरिकको जो मूल अधिकार देता है, वे हमने देख लिए। सच पूछा जाये तो संविधानकी आत्मा ये मूल अधिकार ही हैं। सामान्य प्रजाको ऐसे ही अधिकार चाहिये। प्रामाणिकतासे अपने ढंगसे प्रजा मुक्त जीवन जीना चाहती है। उसको इस बातका विश्वास होना चाहिये कि सरकारी सत्ता उसमें कुछ दखल नहीं करेगी, बल्कि मदद करेगी। यह बात उसे मूल अधिकार देती है। परराज्यमें ये अधिकार नहीं थे, स्वराज्यमें उसे पहली बार ही ये अधिकार मिलते हैं।

परराज्य कुछ अधिकार दे भी, तो फिर जितने वह निभाये उतने ही सच्चे अधिकार रहते हैं। मगर उनके लिए संविधान या क़ानूनी तौर पर उसकी कुछ भी ज़िम्मेवारी नहीं रहती। लेकिन स्वराज्यका संविधान ये मूल अधिकार भेदभाव बिना हरएक प्रजाजनको देता है; और प्रजा और सरकार दोनों समान रूपसे इन अधिकारोंकी रक्षाके लिए ज़िम्मेवार हैं। यह हमारे राष्ट्रके संविधानकी नींव है। उसका उल्लंघन कोई भी सरकार नहीं कर सकती और अगर करे तो प्रजा अदालतके ज़रिये उसे ठीक करा सकती है। ये मूल अधिकार हमारे राष्ट्रके जीवनमें क़ायम रहें, यह देखनेका काम सिर्फ प्रजाका ही नहीं, मगर अब अदालतका भी हो जाता है। इन अधिकारोंकी रक्षाके लिए

अदालतोंको पूरी सत्ता संविधानने दी है। इस तरह न्यायका आसन सर्वोपरि बना है।

इन अधिकारोंको भंग करने वालेको सज़ा देनेका क़ानून बनानेकी सत्ता केन्द्रिय धारासभाको–लोकसभाको–दी है। मतलब यह कि मूल अधिकारोंका भंग हमारे देशमें गुनाह क़रार दिया गया है।

इन अधिकारों पर अमल करनेमें एक दो अपवाद हैं। एक तो लश्करके बारेमें या जब सरकारी नौकर लश्करी क़ानून पर अमल करते हों तब निश्चित समयके लिए उन्हें कुछ छूट देनेका अधिकार लोकसभाको है। इस विशिष्ट अधिकारका उपयोग प्रजाके प्रतिनिधि ही कर सकते हैं, सरकारके अधिकारी नहीं, यह ध्यानमें रखना चाहिये।

भारतके संविधानमें न्याय पानेका यह मूल अधिकार एक बहुत बड़ी बात है। डॉ० आंबेडकरने संविधानके इस प्रकरणको संविधानकी आत्मा और उसका मर्म कहा है; यह बात बिलकुल ठीक है।

प्रजाजन खुद इन अधिकारोंका उपयोग कर सकें इसके लिए हरएकको इन अधिकारोंका उपभोग करनेमें एक दूसरेके अनुकूल होना चाहिये। अधिकार-संबंधी इस ज़िम्मेवारीको अदा करनेसे ही अधिकार अच्छी तरहसे सुरक्षित रह सकते हैं। अधिकार और ज़िम्मेदारी ये सच्चे नागरिक धर्मकी ढालके दो पहलू हैं। उसका सीधा पहलू ज़िम्मेदारी है, क्योंकि इसके होनेसे ही अधिकार अपने आप मिल जाते हैं। अधिकारकी चाबी ज़िम्मेदारीके पास ही रहती है।

१०

सामाजिक ज़िम्मेवारी

विचारक कहते हैं कि, आजकल दुनियामें सामाजिक गुणोंकी बहुत कमी हो गई है; इसीलिए आजकलके समाजको बहुत दुःख सहन करना पड़ता है। व्यक्तिके तौर पर आदमी अच्छा, सुशील और विवेकी होता है, लेकिन सामाजिक कामोंमें उसके ये गुण ग़ायब हो जाते हैं।

इसकी हम अनेक मिसालें दे सकते हैं। हम अपने ही समाजकी कुछ मिसालें लें। हम हमारे यहाँकी गंदगीको लें। हमारे घर कैसे स्वच्छ होते हैं। लेकिन, हमारे मुहल्ले, गलियाँ, और गाँव क्यों इसी तरह स्वच्छ नहीं रहते? इसका एक ही कारण है, हमने सामाजिक ज़िम्मेवारीका गुण जितना चाहिये उतना नहीं अपनाया। दूसरेके सुखके बारेमें हम बेपरवाह रहते हैं। अपने आंगनका कूड़ा मैं पड़ौसीके आंगनमें फेंक दूं। मैं अपनी खिड़कीसे कूड़ा फेंक दूँ, पानी फेंक दूँ, थूँकूँ, ऐसा करते समय नीचेसे जानेवालेका ख्याल तक न रखूँ! यह कितनी ग़ैरज़िम्मेदारी, और कितनी बेपरवाही है।

क़ानूनमें बताया गया है, 'हम अपनी चीज़का इस तरह उपयोग करें कि जिससे दूसरेको हानि न पहुँचे।' यह बात गीता दूसरी तरह कहती है, 'जो आदमी दूसरेमें अपनेको देखता है और अपनेमें दूसरेको देखता है वही दृष्टा है, ज्ञानी है।' इस सिद्धाँतका हम क़दम क़दम पर

उल्लंघन करते हैं। इसीलिए हमें और हमारे समाजको अनेक आफ़तों और मुश्किलोंका सामना करना पड़ता है।

म्युनिसीपैलिटीकी ओरसे की गई रोशनी, बनाई गई नालियों तथा रास्तोंकी सहूलियत वग़ैरहके उपयोग करनेमें बड़ी लापरवाही रहती है, इसी तरह रेलवे और दूसरी सार्वजनिक सहूलियतोंके बारेमें भी बहुत बेपरवाही देखनेमें आती है। इससे कितनी परेशानी उठानी पड़ती है! इन सब बातोंमें ऊपर बताये हुए क़ानून या धर्मके वाक्य पर अमल किया जाय तो कितना भारी फेर पड़ जाय?

देशके राज्यतंत्र और सरकारके साथ बर्तावमें भी ऐसी ही कमियाँ दिखाई देती हैं। आजके ज़मानेमें प्रजातंत्र यह लोकप्रिय राज्यपद्धति मानी जाती है। इस पद्धतिकी सफलताकी कुंजी सामाजिक शिक्षामें ही है। प्रजाके हरएक आदमीको देशको अपना घर और उसमें रहनेवाले हरएकको अपने भाईकी तरह समझकर बरतना सीखना चाहिये। अपने देशका स्वराज्य अच्छी तरहसे चले इसके लिए जो जो गुण चाहिये उनको हासिल करना और जो फ़र्ज़ अदा करने हैं उनको अदा करना, हरएक नागरिकको अपना धर्म समझना चाहिये। जिस देशमें इस प्रकारकी समझ नहीं आती वह देश स्वराज भोगते हुए भी वह स्वराज नहीं संभाल सकेगा, और वहाँके लोग मेलमिलापसे लंबे अरसे तक इकट्ठे भी नहीं रह सकेंगे।

एक ही मिसाल लें। अमलदारोंको रिश्वत दी जाती है यह सब देशोंमें होता है। लेकिन जिस देशके लोगोंने

समाजधर्मकी तालीम पायी है वे ऐसा पाप कभी नहीं करेंगे। सौंपा हुआ काम करना यह सरकारी या खानगी नौकरका कर्तव्य है। अगर वह न करे तो वह दंडका पात्र है; वह देशकी कुसेवा करता है। लेकिन वह रिश्वत लेता है और संकुचित मनके लोग अपना ही स्वार्थ देखकर उसे रिश्वत देते हैं। इसलिए इस बुरी आदतके लिए सिर्फ़ अमलदारको ही दोष देना ठीक नहीं है। उनको यह बुरी आदत डालनेवाले और उस आदतको पोषण देनेवाले प्रजाजन भी उतने ही ज़िम्मेवार हैं। बल्कि वे ही ज्यादा ज़िम्मेवार हैं, क्योंकि उन्होंने ही यह आदत डाली है, वे चाहें तो उसकी यह आदत फ़ौरन ही छुड़वा दें।

इस तरह अपना बर्ताव विचारपूर्वक बनाना यह धर्म-दृष्टिसे भी ज़रूरी है। और इसलिए समाजमें योग्य बर्ताव रखना यह धर्मका भी एक अंग है। इस अंगको समाजधर्म कहा जाता है। इसकी नींव ऊपर बताई गई ज़िम्मेदारी या दूसरेके सुखकी परवाह पर ही है। इस गुणमें से दूसरे अनेक छोटे मोटे गुणोंका उद्भव होता है। ये सब सामाजिक गुण चारित्र्यका एक भाग समझे जाते हैं। इससे हरएकको इन सब गुणोंको अपनेमें लाना चाहिये। इसीमें सज्जनता है और यही स्वराजको सफल बनानेकी कुंजी भी है।

खंड २

सरकारके संविधानकी रूसे फ़र्ज़

११

भारतकी सरकारोंको आज्ञा

भारतके संविधानने हरएक नागरिकको मूल अधिकार दिये हैं। ये अधिकार ऐसे हैं कि जिनके लिए फ़रियाद की जा सकती है। अदालतोंको इसके लिए जागृत रहना है। मतलब यह है कि भारतकी केन्द्रीय और प्राँतीय सब सरकारें उनको नियमके तौर पर मान कर चलनेके लिए बंधी हुई हैं।

इसके सिवा संविधानमें और कितनी ही ऐसी बातें हैं जो प्रजाके आरोग्य और खुशहालीके लिए बहुत ज़रूरी हैं, लेकिन उन पर सरकारें अमल न करें तो अदालतोंके ज़रिये अमल नहीं करा सकते यानी सरकार क्यों अमल नहीं करती इसकी फ़रियाद अदालतमें नहीं की जा सकती।

तो फिर इन बातोंके कहनेका अर्थ क्या है, यह सवाल उठता है। इसका अर्थ बहुत ज़्यादा है। ये बातें यह बताती हैं कि स्वराज सरकारकी राज्यनीतिमें इन बातोंके बारेमें ज़रूरी क़दम उठाना यह चर्चा या वादविवादकी बात नहीं है। बल्कि यह तो भारतकी राज्यनीतिके सिद्धाँतके समान है। इनको मूल अधिकार नहीं कहा जा सकता, लेकिन संविधानमें राज्यनीति संबंधी ये दी हुई आज्ञायें हैं।

संविधानकी रूसे ये स्वराज सरकारके फ़र्ज़ हैं । इन आज्ञाओंका पालन करनेके लिए राज्य प्रश्न नहीं उठा सकते ।

किन किन बातोंके लिए ये आज्ञायें दी गई हैं उन्हें देखनेसे पता चलेगा कि, मूल अधिकारोंकी तरह ये आज्ञायें भी भविष्यमें हमारे राष्ट्रकी शक्ल कैसी होगी यह बताती हैं । प्रजा और सरकार दोनोंको इन आज्ञाओंके प्रति वफ़ादार रहकर चलना चाहिये ।

१२

न्यायका राज्य

आज हरएक कहता है कि भारतमें स्वराज्य तो आ गया है लेकिन अब यह देखना है कि वह सुराज्य भी बने । बात तो ठीक है, लेकिन यह याद रखना होगा कि, सुराज्यकी पहली शर्त है स्वराज; यह शर्त अब पूरी हो गई है। अब आगे क्या किया जाय इसका नक़शा यह आज्ञायें बताती हैं ।

उनमें सबसे पहली बात न्यायी राज्यकी है। सच पूछा जाये तो राज्यका मतलब ही न्याय है। जहाँ न्याय नहीं वहाँ राज्य नहीं । न्यायका राज्य होना चाहिये, और हरएक क़ानून न्यायी होना चाहिये। सुराज्यका प्राण ही न्याय है। इसके बिना स्वराज्य भी कड़ुआ ज़हर हो जाता है ।

और न्यायका मतलब धर्म है । हमारे पुराणोंमें यम राजाको धर्मराज भी कहा है। और कल्पना यह है कि वह जीवमात्रका अटल न्याय करता है। न्यायके बिना राज्य,

Library
Srinagar.

धर्मराज्य या रामराज्य नहीं बन सकता। इसलिए न्याय हरएक राज्य या राज्यपद्धतिका प्राण है—आत्मा है। अंग्रेज़ी भाषामें 'क़ानूनका राज्य' यह शब्दप्रयोग है। इसके बदले 'न्यायका राज्य' कहना ज़्यादा अच्छा है। क्योंकि क़ानून अच्छा या बुरा, न्यायी या अन्यायी हो सकता है। इसलिए न्यायका राज्य यानी सुराज्य यही शब्दप्रयोग ठीक है।

और यह न्याय समाज जीवनके सब अंगों पर छा जाना चाहिये। इसी लिए क़ायदे और अदालतके सामने सबकी समानता, ऊँचनीचके भेदभावका नाश वगैरह बातें मूल अधिकारोंमें रखी गई हैं। यह चीज़ सामान्यतया राज्यकी समग्र नीतिमें ओतप्रोत हो जानी चाहिये। भारतके राज्योंको जो आज्ञायें दी गई हैं इनमें पहली आज्ञा यही है। संविधानकी धारा ३८ में कहा है कि,

"जहाँ तक हो सके ऐसी समाज व्यवस्था की जाय कि राजकीय सब अंगोंमें न्यायकी भावना ओतप्रोत हो और उसकी रक्षा की जाये और इस तरहसे लोककल्याण बढ़ानेके लिए राज्य प्रयत्नशील रहे।"

यह सामान्य आज्ञा देनेके बाद संविधान अपनी अगली धारा ३९ में कई ख़ास बातें बताता है—

"ख़ास करके नीचेकी बातोंको प्राप्त करनेके लिए राज्य अपनी नीति बनायेगा :—

(१) स्त्री पुरुष सब नागरिकोंको समानतापूर्वक अपना निर्वाह करनेके लिए ज़रूरी साधन जुटानेका अधिकार होगा।

(२) समाजकी संपत्तिकी मालिकी और उस पर अधिकार इस तरहसे रहेगा कि जिससे सबका ज़्यादासे ज़्यादा भला हो।

(३) आर्थिक तंत्र या व्यवस्था ऐसी न हो कि जिससे संपत्ति और उत्पादनके साधन एक हत्था या इस तरह केन्द्रित हो जायें कि जिससे सबके फ़ायदेको हानि पहुँचे।

(४) एक ही प्रकारके कामके लिए स्त्री और पुरुषको समान मेहनताना मिले।

(५) स्त्री-पुरुष कारीगरोंकी शक्ति और उनके स्वास्थ्यका, बच्चोंकी छोटी उम्र होनेके कारण उनका दुरुपयोग न होगा। और आर्थिक तंगीके कारण नागरिकोंको ऐसे काम नहीं करने पड़ेंगे कि जो उनकी उम्र और शक्तिके लिए ठीक न हों।

(६) ख़याल रखा जायेगा कि छोटे बच्चों और नौजवानोंका शोषण न हो और उनके नैतिक और भौतिक विकासमें रुकावट न पड़े।

नये संविधानमें पुख़्त मताधिकार तय किया गया है। और मूल अधिकारोंमें अख़बार, सभा, मंडल बनाने वग़ैरहकी प्राथमिक स्वतंत्रताएँ दी गई हैं। इससे हरएक नागरिकको राजकीय न्याय मिलता है। मगर इतना ही क़ाफी नहीं। इस न्यायको सही अर्थमें पक्का बनाना हो तो आर्थिक न्यायका भी समाजमें होना बहुत ज़रूरी है। कोई किसीका दुरुपयोग न कर सके ऐसा होना चाहिये। ऊपरकी धारा यही कहती है और राज्योंको आज्ञा देती है कि हरएक क़ानून बनाते समय इस सिद्धांतका ध्यान रखना चाहिये।

१३

ग्रामपंचायत — स्वराजकी नींव

संविधानने भारतके सब राज्योंको जो आज्ञायें दी हैं उनमें दूसरी आज्ञा ग्रामपंचायतोंकी रचना करनेके लिए की है। अपना इतिहास देखनेसे पता चलता है, कि हमारे देशमें अंग्रेज़ी राज्यकी स्थापना हुई इससे पहले देशमें ग्राम-पंचायत संस्था जीती जागती थी। बेशक उसका लिखा हुआ संविधान नहीं था, लेकिन लिखे हुए विधानसे भी मज़बूत उसकी परंपरा पहलेसे चली आ रही थी।

पंचायत व्यवस्थाके ज़रिये गांव एक छोटे राज्यकी तरहसे था और उसके ज़रिये ग्राम-स्वराज्यका उपभोग करता था। दिल्लीमें या और क़िसी भी राजधानीमें राजकी उथल-पुथल हो जाये, फिर भी गांवके लोगोंको उससे कुछ ख़ास तकलीफ़ या परेशानी नहीं उठानी पड़ती थी। सारा गांव एक बड़े कुनबेकी तरह रहता था। छोटे बड़े झगड़े, स्वरक्षा, बच्चोंकी प्राथमिक शिक्षा, प्रौढ़ोंके लिए कथावार्ता, गरीबोंकी देखभाल, गांवके अतिथि या साधुसंतोंकी सेवा — वग़ैरह अनेक छोटी बड़ी सेवायें, गांवके लोग मिलकर अपने पंचों द्वारा कर लेते थे। यह प्रथा हमारी लोकशाहीकी नींव थी। इस तरह तालीम पाकर हमारी प्रजा स्वतंत्रताका उपभोग करती थी।

यह प्रथा अंग्रेज़ सरकारको अच्छी लगे ऐसी नहीं थी। उसको तो पर-देश पर राज्य करना था। वह ऐसी प्रथाको पोषण दे तो उसका काम कैसे चले? इसलिए उसने विचारपूर्वक अपनी ज़रूरतके मुताबिक़ नया तरीक़ा शुरू किया। उसका परिणाम यह हुआ कि पंचायतकी प्रथा धीरे धीरे मंद पड़ गई। अंग्रेज़ी राज्यने झगड़ोंके लिए अदालतें शुरू कीं और उनके द्वारा न्याय पानेके लिए एक लंबी प्रक्रिया शुरू की। उसमें से झगड़े, दलाल, वकील, और क़िस्म क़िस्मके नये टंटे खड़े हो गये। ग्रामपंचायतका कुछ स्थान नहीं रहा। उसकी निस्बत पटवारीका महत्त्व ज़्यादा हुआ और गाँवका मुखिया सरकारका हाथ बन गया, और उसकी नियुक्ति सरकारकी ओरसे होने लगी। इसका परिणाम यह हुआ कि हमारे गांवोंमें झगड़े टंटे वैमनस्य वग़ैरहके रोग फैल गये। अब फिर ग्रामपंचायतोंकी रचना की जाये और वे काम करने लगें तो उनमें भी ये रोग पैदा हो जायें ऐसा शुरूमें हो सकता है। इससे परेशान होकर कुछ लोग पंचायतका विरोध करते हैं और कहते हैं कि ग्रामपंचायत तो हमें नहीं चाहिये। ऐसी भूल शुरूमें केन्द्रीय सरकारके क़ानून मंत्रीने की भी थी। लेकिन संविधान सभाने इस भूलको सुधारकर नीचेकी आज्ञा देना तय किया: —

धारा ४०: — "ग्रामपंचायतोंकी रचनाके लिए राज्य उचित करें और वे स्वराज्यकी इकाईके तौर पर काम कर सकें इसके लिए ज़रूरी सत्ता और अधिकार उनकोदिये जायें।

सच्चे स्वराजकी स्थापना करनी हो तो इस धाराके मुताबिक़ राज्योंको चलना चाहिये और बीचके समयमें लोगोंमें पैदा हुई खराबियोंको दूर करके फिरसे उन्हें ग्राम स्वराज्यके सुखका उपभोग कराना चाहिये।

स्वराज्यकी नींव ग्रामपंचायतें हैं ये स्थानिक स्वराज्यकी सब प्रकारकी संस्थायें हैं। उनमें नगरपालिका, लोकलबोर्ड स्कूलबोर्ड, और गाँवमें रचनाकी जानेवाली ग्रामपंचायतें—इन सब संस्थाओंका समावेश हो जाता है। इन सब संस्थाओंके ज़रिये स्थानिक जनताकी क़िस्म क़िस्मकी सेवायें की जाती हैं। इसकेलिए सबको साथमें मिलकर काम करना है। सबका कल्याण और प्रगति हो यह देखना चाहिये। पिछड़े और दुर्बल समझे जानेवाले वर्गोंकी ओर खास ध्यान देना ज़रूरी है। इस तरह लोगोंको काम करनेकी तालीम इन संस्थाओंके ज़रिये मिलती है। इनमें से प्रजाके सेवक तैयार होते हैं। भविष्यमें बड़े बड़े कार्य करनेके लिए उनको पहला पाठ यहाँ ही मिलता है। सर्वोदयका सही अर्थ यहाँ ही साफ़ दिखाई देता है। स्थानिक ईर्षाद्वेष बहुत होते हैं यह ठीक है, फिर भी उन पर क़ाबू पाकर काम करनेका ढंग भी यहाँ ही सीखनेको मिलता है।

१४

कामधंधे और शिक्षाका अधिकार

लोकशाही राज्यपद्धति स्थानिक संस्थाओंको और ग्राम-पंचायतोंको अपनी नींव मानती है । इसी बात पर सरकार और उसके नौकरोंको विश्वास रखकर राज्यव्यवस्था करनी चाहिये । लेकिन प्रजा पर अविश्वास रखकर काम करनेवाली नौकर-शाहीने अभी तक प्रजा पर अधिकार जमानेकी वृत्ति नहीं बदली और जल्दीसे बदलेगी भी नहीं । इससे संविधानने राज्योंको जो आज्ञायें दी हैं उनमें ग्रामपंचायतकी रचनाको जानबूझकर सबसे बड़ी बात बताई है ।

दूसरी आज्ञा इससे भी महत्त्वकी कही जायेगी वह प्रजाके हरएक आदमीके मूल अधिकारकी तरह ही है । दुःख इस बातका है कि उसे मूल अधिकारके तौर पर मानकर आज चल नहीं सकते ।

यह दूसरी आज्ञा धारा ४१ में दी है; वह इस प्रकार है :–

“हरएकको काम पानेका, शिक्षण, बेकारी, बुढ़ापे, बीमारी, अपंगता और इसी प्रकारके लाचारीके प्रसंगोंमें राज्यसे मदद पानेका जो अधिकार है, इस बारेमें राज्य अपनी आर्थिक शक्ति और विकासकी मर्यादामें रह कर उचित प्रबन्ध करेगा ।”

इस आज्ञामें जिन बातोंको स्वीकार किया है, वे महत्त्वकी हैं । उनमें हरएक नागरिकको नीचेकी चीज़ें प्राप्त

करनेका अधिकार हक्कके तौर पर माना गया है :

(१) काम पानेका अधिकार

(२) शिक्षा पानेका अधिकार

(३) बेकारी, बीमारी, बुढ़ापा, अपंगता और इस तरहके लाचारीके प्रसंगोंमें राज्यसे मदद पानेका अधिकार।

और इन अधिकारोंको प्रजा भोग सके और ये अधिकार प्रजाके लिये उपयोगी हों ऐसी व्यवस्था सरकारको करनी चाहिये, यह हुक्म राज्योंको दिया गया है।

आजकलके ज़मानेमें ये अधिकार नागरिकके अधिकारके तौर पर माने जाते हैं। राज्योंका धर्म है कि इस बारेमें जो कुछ हो सके वह करें। संविधानकी इस धारामें राज्यको इस धर्मकी आज्ञा की गई है। हाँ उसमें मर्यादाकी बात की गई है कि, राज्यको अपनी आर्थिक स्थिति और विकासकी शक्ति देखकर यह ज़िम्मेदारी उठानी होगी। यह मर्यादा समझी जा सकती है। लेकिन उसका अर्थ यह नहीं कि इस बारेमें राज्य कुछ भी न करें। उनकी नीति इस आज्ञासे निश्चित हो गई है। इसमें वे कुछ गड़बड़ नहीं कर सकते; मात्र फेर इतना ही है कि, ये क़ानूनी अधिकार नहीं हैं, इससे मूल अधिकारोंके तौर पर नागरिक इस बारेमें दावा या फ़रियाद नहीं कर सकता।

इस आज्ञाके पीछे जो मूल बात है उसे भी ध्यानमें लेना चाहिये। उसकी नींवमें ऐसी मान्यता रही है कि हरएक नागरिकको अपना विकास करनेका अबाधित अधिकार है; और उसके लिए उसे शिक्षा पानेका अधिकार है।

दूसरी बात यह कि हरएक नागरिकको मानव-जीवनके लिए उचित हो इस तरहसे रहनेका अधिकार है। इसका अर्थ यह है कि समाजकी अर्थ-व्यवस्था ऐसी होनी चाहिये कि उसको रोटी पैदा करनेके लिए काम मिले, और उस कामसे उसे पूरा मेहनताना मिल जाये। इस अधिकारको "काम करनेका अधिकार" कहा गया है। इस अधिकारका उपयोग किया जा सके, ऐसी व्यवस्था या अर्थ-व्यवस्थाके तंत्रकी रचना करना, यह राज्य और समाजका धर्म है। इससे यह ज़िम्मेदारी पैदा होती है कि आदमी बेकार हो जाये तो राज्य और समाजको उसकी मदद करनी चाहिये।

इसके अलावा, काम करनेके अधिकारमें क़ुदरती या दूसरे कुछ कारणोंसे लाचारी पैदा हो जाय तो भी मदद मिलनी चाहिये। इन कारणोंमें बीमारी, बुढ़ापा, अपंगता, दुर्घटना वग़ैरह शामिल हैं। इसके लिए भी अर्थतंत्रमें योग्य व्यवस्था होनी चाहिये।

हमारे देशमें बेकारी तो भारी सामाजिक और आर्थिक रोग हो गया है। रोग और अपढ़ताका तो शुमार नहीं। ऐसी अवस्थामें ऊपरकी आज्ञा राज्य और समाजके लिए एक ज़रूरी कार्यदिशा सूचित करती है। इस ओर राज्योंको तेज़ीसे प्रगति करनी चाहिये।

१५

स्वराज यानी राष्ट्र-कुटुंबभाव

व्यवस्थित राज्यतंत्रमें उस राज्यतंत्रकी प्रजा एक कुनबेकी तरह है। जिस तरह घरमें छोटे बड़े, बीमार तंदुरस्त सब मिलकर सुखचैनसे रहते हैं, इसी तरह राष्ट्र-कुटुंबोंमें भी होना चाहिये। हमने देखा कि संविधानकी आज्ञा है कि बेकारी, बीमारी, बुढ़ापे, अपंगता वग़ैरहकी लाचारीकी स्थितिमें पड़े हुए लोगोंकी देखभाल करनी चाहिये।

इसकी नींव यह है कि सारी प्रजा व्यवस्थित रीतसे काम करे, संपति पैदा करे। उसके लिए उसको अच्छी शिक्षा मिलती रहे; इसीलिए शिक्षाका भी हक़ माना गया है और मुफ़्त शिक्षा देना सरकार अपना फर्ज़ मानती है।

शिक्षा भो निकम्मी या जैसी तैसो नहीं होनी चाहिये; लेकिन जिस तरहके समाजकी कल्पना की गई है उसकी रचनामें काम आये वह ऐसी होनी चाहिये। गांधीजोने ऐसी शिक्षाको ही 'बुनियादी तालीम' कहा है। यह शिक्षा जीवनके ज़रूरी और उपयोगी काम और उत्पादक श्रम या उद्योगके ज़रिये अनुकूल वायुमंडलमें व्यवस्थित रीतसे देनी चाहिये। गाँधीजीने इस तरहकी पद्धति सूचित की थी।

और उन्होंने यह भी दावा किया था कि यह शिक्षा अगर राष्ट्रकी बुनियादी शिक्षा हो जाय, तो फिर कोई भी बेकार नहीं रहेगा। सब मानपूर्वक रोटी कमा सकेंगे। इसके लिए उचित आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था हो

सकेगी। इसलिए ही संविधानने हरएक नागरिकको शिक्षा और काम पानेका अधिकार दिया है।

यह काम और शिक्षा किस प्रकारकी हो, इसका अर्थ इसके हेतुसे समझना चाहिये; और वे पूरे हों इस तरह इन दोनोंकी व्यवस्था सरकारको करनी चाहिये।

इस दृष्टिको खयालमें रखकर ही संविधानमें दो धारायें और हैं। उनमें, शिक्षा कैसी हो — वह बुनियादी तालीम होनी चाहिये, यह साफ़ शब्दोंमें नहीं कहा। लेकिन कामके अधिकारके बारेमें ज़िक्र करते हुए एक तरहसे उसको क़ाफ़ी स्पष्ट किया है। अब हम यह देखेंगे।

१६

लोक कल्याणके लिए स्वराज्य

सुव्यवस्थित और स्वतंत्र देशके नागरिकोंको काम न मिले इसके लिए उनकी क़िस्मत या ईश्वरका दोष नहीं है। लेकिन ईश्वरकी दी हुई देनको आदमी ग़लत रीतिसे उपयोग करके इस तरहकी ख़राब परिस्थिति उत्पन्न करता है, यही कहा जायेगा। इसलिये राज्य या स्वराज्य सरकारोंका धर्म है कि, वे हरएकको उचित काम मिल जाये इस तरहकी अर्थ-व्यवस्था और समाज-व्यवस्था करें।

जैसा तैसा काम मिले यह भी नहीं हो सकता। हमारे कई क़स्बोंके गाँवोंमें नगरपालिकाके मेहतरोंको जिस ख़राब स्थितिमें काम करना पड़ता है वह रीत किसी

तरहसे भी निभ नहीं सकती। आदमीके लीए आदमीके तौर पर स्वच्छ और सुव्यवस्थित तौर पर स्वमानसे काम करनेकी व्यवस्था होनी चाहिये।

इसके अलावा, सारे दिन काम करनेवालेको पेट भरनेके लायक़ उजरत मिल जानी ही चाहिये। स्त्रियाँ काम करनेवाली हों तो उनको प्रसूति वग़ैरहके समय राहत मिले ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये। मतलब यह कि पूरे वेतनके साथ उन्हें राहत मिलनी चाहिये।

इससे संविधानकी धारा ४२, ४३ में कहा है कि,

"४२. काम करनेकी वाजिबी और मानुषी सुविधायें मिलें इसके लिये और प्रसूतिके समय राहतके लिये राज्य व्यवस्था करेगा।"

"४३. खेतीमें, उद्योगधंधोंमें या दूसरी जगह काम करनेवाले, सबको काम मिले, जीवनके लिए पूरा मेहनताना मिले, कामकाजके लिये अनुकूल परिस्थिति हो कि जिससे अमुक जीवनधोरण बना रहे; और ख़ाली समय और सामाजिक और सांस्कृतिक विकासके अवसरोंका पूरा उपभोग करनेकी सहुलियत मिले, इस उद्देश्यको पूरा करनेके लिये उचित क़ानून बनाकर या अनुकूल अर्थतंत्र रचकर या किसी तरहसे भी राज्य प्रयत्न करेगा और ख़ास तौर पर ग्राम-विस्तारोंमें अलग अलग या सहकारी तौर पर गृहोद्योगोंके विकासका प्रयत्न भी राज्य करेगा।"

संविधानकी इन धाराओंकी बातें ऐसी हैं कि उन पर तुरन्त अमल नहीं हो सकता। धीरे धीरे काम किया जाये

तभी हो सकता है। फिर भी स्वराज्य सरकारकी राज्यनीति इस बारेमें निश्चित हो गई है। यही बड़ी बात है कि अब राज्य-नीतिसे इस ओर मुड़े हिंदका स्वराज्य लोककल्याणके लिये ही होगा। वह सबकी भलाईके लिए सर्वोदयका काम करेगा, ऐसा विश्वास संविधानकी इन आज्ञाओंमें दिलाया गया है।

१७

गृहोद्योग और ग्रामोद्योग

इससे पहले हमने देखा कि, भारतमें बेकार रहना, थोड़ी मजदूरीका जैसा तैसा काम मिलना, बेगार या अप-मानयुक्त काम—ये चीज़ें, संविधानने हराम मानी हैं। और इन्हें दूर करनेकी ज़िम्मेदारी सरकार या राज्यों पर है। इसका अर्थ यह है कि हरएक नागरिकको समझना चाहिये कि उसे काम करना है, बैठकर खाना हराम है, इतना ही नहीं बल्कि प्रजाका आर्थिक द्रोह है। और दूसरी ओर राज्य यह समझे कि हरएकको मानपूर्वक पूरे मेहनतानेका काम मिले यह देखना सरकारका काम है। मतलब यह है कि राज्य अपनी आर्थिक और औद्योगिक-व्यवस्था, इस तरहसे करे कि जिससे वह इस फ़र्ज़को अदा कर सके।

ऐसा करना हो तो सरकारको एक चीज़की ओर ख़ास ध्यान देना होगा। पिछले प्रकरणमें धारा ४३ में संविधानने ख़ास ज़ोर देकर कहा है कि ऊपरकी बातको अमलमें लाना

हो, तो भारतके देहातोंमें गृहोद्योगों और ग्रामोद्योगोंका विकास हो इसकी ओर ख़ास ध्यान देना चाहिये ।

इस आज्ञामें ख़ूब रहस्य भरा पड़ा है । इसलिये गांधीजोने खादी जैसे गृहोद्योग और जीवनकी आये दिनकी

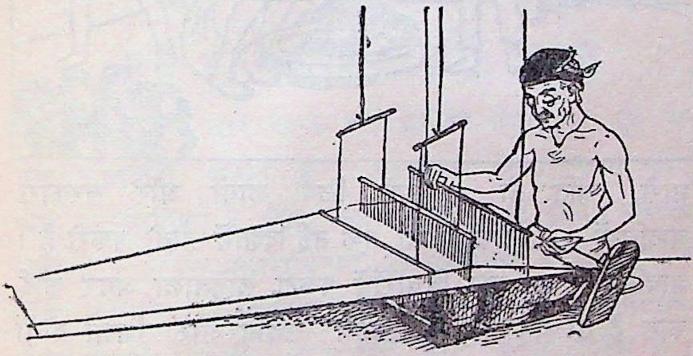

ज़रूरतोंको पूरा करनेके लिये ग्रामोद्योग हमें खास प्रयत्न करके सिखाये थे; उसका यही प्रयोजन था । हमारी आबादी बहुत ज़्यादा है और वह देहातोंमें ही अधिक है । यदि उसको काम देना हो तो दूसरा रास्ता है ही नहीं ।

धारा ४३ से संविधानने गांधीजीके इस राष्ट्रीय कार्यक्रमको स्वीकार किया है । भारत सरकार इस तरफ़ ध्यान दे तो हमारे देशके बहुतसे दुःख दूर करनेकी ओर प्रजा झुक जाये । इसके लिए भारतकी प्रजाको तैयार करनेके लिए उचित शिक्षाकी व्यवस्था करनी होगी और राज्यके कई महकमोंको व्यवस्थित करना होगा । यह तभी हो सकता कि जब चलती आई सरकारकी व्यवस्था और विचारधारामें

भारी क्रांति हो । इसके लिये लोगों और सरकारी आदमियों — दोनोंकी शिक्षा एक नई दिशामें होनी ज़रूरी है । आदमियोंके मन और विचारोंमें पलटा लानेवाला अगर कोई काम है तो वह यह है । इसमें उद्योग और शिक्षा दोनों आपसमें ओतप्रोत हैं ।

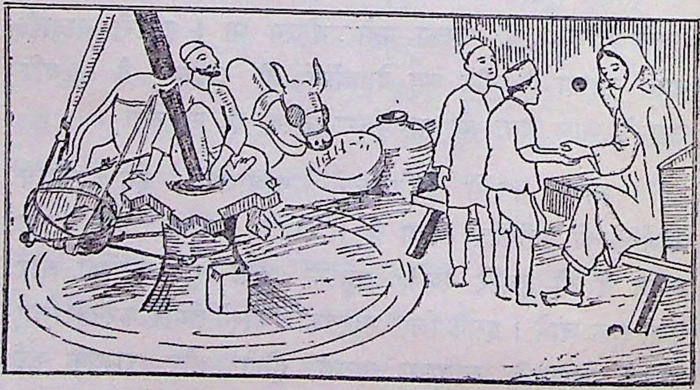

सचमुच प्रजामें उद्योग और शिक्षाका अधिकार मूर्तिमंत करना हो, तो खादी और ग्रामोद्योग और उसके

द्वारा सार्वजनिक शिक्षाके सूर्यके आसपास हिंदके विकासके सभी कामोंकी व्यवस्था करनी चाहिये । तभी सबका राज्य होगा । और उसमें सब समान होंगे ।

१८

एक ही तरहका दीवानी क़ानून

आजकल सारे देशके सब लोगोंके लिए एक ही तरहके फ़ौजदारी क़ानून हैं । गुनाहगार किसी खास कौम, धर्म या जातिका है इसी वजहसे उसके लिये क़ानून पलटता नहीं है । लेकिन उत्तराधिकार, लग्नव्यवस्था वग़ैरह बातोंमें ऐसा नहीं है । हिन्दुओंके लिये एक क़ानून, मुसलमानोंके लिये दूसरा, पारसी, ईसाइयोंके लिये अलग क़ानून हैं । मतलब यह है कि दीवानी बातोंमें क़ानून क़ौम या धर्मके अनुसार अलग रहता है । और हिन्दुओंमें भी जातिके फ़र्क़से क़ानून बदल जाता है ।

सुधारकोंने इस स्थितिकी काफ़ी आलोचना की है । दीवानी क़ानून अलग अलग होनेसे राष्ट्रके सब लोग एक ही तरहकी समाज-व्यवस्थामें नहीं आ सकते । इससे धर्म या क़ौमके सम्बन्धसे जुदाईका भाव क़ायम रहता है । क़ानूनकी निगाहमें सब एक होने चाहिये, इसमें फ़र्क़ हो जाता है । इससे एक राष्ट्रके अनेक समाज बन जाते हैं, और धर्मकी बातको ज़्यादा महत्त्व मिलनेसे राज्य-व्यवस्था भी जैसी चाहिये वैसी सरल नहीं रहती ।

इससे संविधानने भारतके राज्योंको आज्ञा दी है कि (धारा ४४) "भारतके सारे राज्यविस्तारमें नागरिकोंके लिये एकसा दीवानी-क़ानून हो, इसका प्रयत्न राज्य करेगा।"

हमारे समाजके लिये यह एक बड़ा भारी परिवर्तन होगा। इससे क़ौम और धर्मके लिये ज़रूरतसे ज़्यादा ममता और जनून न रहेगा, और सब एक ही राष्ट्रके नागरिक हैं ऐसी भावना दृढ़ होती जायेगी।

१९

लाज़मी प्राथमिक शिक्षा

भारतका संविधान अपनी धारा ४५ में देशके सब राज्योंको इस तरहसे आज्ञा देता है :

"इस संविधानका अमल शुरू होनेकी तारीख़से दस सालके अंदर अंदर, सब बच्चोंको चौदह सालकी उम्र पूरी होने तक मुफ़्त और लाज़मी शिक्षा मिले, ऐसी व्यवस्था करनेका राज्य प्रयत्न करेंगे।"

आजकल हमारे यहां सौमेंसे ८०–९० आदमियोंको लिखना-पढ़ना ही नहीं आता। इससे ज्ञान पानेके सबसे बड़े साधनका वे उपयोग ही नहीं कर सकते। देश और दुनियामें हररोज़ क्या हो रहा है, यह भी वे नहीं जान सकते, क्योंकि वे समाचार-पत्र नहीं पढ़ सकते और अच्छी किताबें भी नहीं।

यह स्थिति बहुत दुःखजनक है। देशमें अब स्वराज आ गया है, इसके बाद भी लोग इस तरह अनपढ़ रहें तो स्वराज्यका उपभोग और उसका विकास भी नहीं हो सकेगा। स्वराज्यका मतलब है प्रजाका राज्य। जैसी प्रजा वैसा ही राज्य होगा। इसलिये प्रजाकी उन्नति और उसका विकास करना सरकारका फ़र्ज़ है।

इस तरहके करने लायक़ अनेक कामोंमें मुफ़्त और लाज़मी शिक्षाका प्रबंध करना यह एक बड़ा काम है। आज तो लाखो देहांतोंमें शालायें नहीं हैं। फिर वाचनालयों, पुस्तकालयोंकी तो बात ही क्या? इस स्थितिमें से राज्यको निकल जाना चाहिये। संविधानने इसके लिए दस सालकी मर्यादा रखी है। देशका हरएक बच्चा सातसे लेकर चौदह वर्ष तक शिक्षा पा सके ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये।

अभी तो बच्चोंकी १०–११ सालकी उमर तक की शिक्षाकी व्यवस्था की जा रही है। इसमें भी करोड़ों रुपयेका खर्च है। इस ख़र्चका पूरा बदला नहीं मिलता; क्योंकि शिक्षा जितनी अच्छी होनी चाहिये वैसी नहीं है। इससे गांधीजीने बताया कि उद्योग और काम द्वारा जीवनकी तालीम देना, यही सच्ची शिक्षा हे। यह काम बहुत बड़ा है। यदि यह हो सके तो देशकी काया पलटी जा सकती है।

२०

पिछड़ी जातियोंकी रक्षा

हमारे देशमें दो तीन ख़ास काम करने बाक़ी हैं। ये हमारे देशके सामाजिक तथा राजकीय इतिहासमें से पैदा हुये हैं। उनकी तरफ़ अगर दुर्लक्ष किया गया तो प्रजाका सामाजिक और राजकीय विकास छिन्न-भिन्न हो जायेगा। ये काम यह हैं :

१. अस्पृश्यता निवारण

२. पिछड़ी समझी जानेवाली जातियों और वर्गोंका उद्धार;

३. रानी या आदिवासी कहलानेवाली जातियोंका उद्धार।

इनमें से पहला काम सिर्फ़ सामाजिक ही नहीं, बल्कि धार्मिक और आध्यात्मिक भी है। इसका इतना महत्त्व देखकर भारतके संविधानने अस्पृश्यताको गुनाह माना है। इसके बारेमें सिर्फ़ आज्ञा देकर प्रयत्न करनेके लिये नहीं कहा बल्कि उसका त्याग ही संविधानमें मूल अधिकारोंमें गिना है।

दूसरे दो कामोंके लिये संविधानने यह आज्ञा दी है :

"४६. प्रजाके दुर्बल वर्ग—ख़ास करके अनुसूचित जातियोंके हितकी रक्षा राज्य ख़ास तौर पर करेगा; वह उनको सामाजिक अन्याय तथा सब तरहके शोषणसे बचायेगा।"

प्रजाके दुर्बल वर्गोंकी ओर राज्यको पहले ध्यान देना चाहिये। सर्वोदयका अर्थ यही है। जो इतने सबल हैं

कि अपनी देखभाल आप कर सकते हैं उनकी ओर राज्यका झुकाव रहें तो यह किस कामका? प्रजाकीय राज्य तो दुर्बलोंकी ओर ख़ास ध्यान देगा तो ही सबकी देख-भाल अपने आप हो सकेगी। सरकारोंको ऊपरकी धारामें इस तरहकी आज्ञा दी गई है।

इस तरह दुर्बलोंका पक्ष राज्य ले, यह पक्षपात नहीं कहा जा सकता, यह तो राज्यका फ़र्ज़ है।

गांधीजीने कांग्रेसको जो रचनात्मक कार्यक्रम दिया था उसमें भी यही मुख्य चीज़ थी। काव्यकी भाषामें उसको वे दरिद्रनारायणकी सेवा कहते थे; व्यवस्था और व्यवहारकी दृष्टिसे सरकारोंके लिये इसका क्या अर्थ हो सकता है यह संविधानकी धारा ४६ में बता दिया गया है।

२१

मद्यनिषेध

हमारे राष्ट्रीय संविधानकी धारा ४७ मद्यनिषेधके बारेमें है । और इस विषयको प्रजाके पोषण और जीवनके साथ जोड़ दिया है । प्रजाका जीवन-स्तर ऊँचा उठानेमें और उसके आहार और पोषणका जो धोरण है, उसमें सुधार करनेके लिये एक ख़ास बात जो करने लायक़ है तो वह मद्यनिषेध है। यह भी समझा गया है कि मद्यनिषेधबज़ाते ख़ुद एक अच्छी वस्तु है, यह बात उस धारामें इस तरह है:

"लोगोंके आहार तथा जीनेके स्तरको ऊँचा उठाना और लोगोंके स्वास्थ्यको सुधारना राज्य अपना प्राथमिक फ़र्ज़ समझेगा; और ख़ास तौर पर शरीरको नुक़सान पहुंचानेवाले नशीले पेय या पदार्थके–सिवा दवाके तौर पर–इस्तेमालको बंद करनेके लिए राज्य प्रयत्न करेगा ।"

इस धारामें तीन तरहके फ़र्ज़ पर राज्योंका ध्यान खींचा गया है:—

(१) लोगोंके आहारका स्तर

(२) सामान्य जीवन स्तर

(३) सामान्य आरोग्य और तंदुरुस्ती

इन तीनोंके साथ जिसका संबंध है और जो इन तीनोंके लिये ख़तरनाक है ऐसी एक ख़राब आदतका निषेध करके एक चौथी बात उनमें और शामिल की है कि,

(४) मद्यनिषेध सरकारोंका फ़र्ज़ है और इस फ़र्ज़को अदा करनेके लिये उन्हें प्रयत्न करना चाहिये ।

हमारे देशमें बेहद भुखमरी और बेरोज़गारी सैकड़ों वर्षोंसे चली आ रही है। अंग्रेज़ सरकारने इस हालतको ठीक करनेकी अपनी ज़्यादा ज़िम्मेदारी मानी भी नहीं थी। लोग नसीब या दैवका दुःख मान कर ही इसे सहन करने लग गये थे। यह स्थिति भयंकर है। इससे भारतके राज्यसंविधानमें इस स्थितिको ठीक करनेका आदेश उपयोगी और ज़रूरी है।

जहां बेरोज़गारी या भुखमरी होगी वहाँ ग़रीबी होगी यह साफ़ बात है। ऐसे देशमें फिर जीवन-धोरणका क्या धोरण होगा? जहाँ लोगोंके लिए खानेपीने ओढ़ने पहनने और रहनेके लिए सामान्य साफ़ मकानकी भी कठिनाई हो वहाँ जीवन-धोरण ऊँचा उठानेके लिए विशेष ध्यान देकर प्रयत्न करना ही चाहिये। इस बात पर भी अंग्रेज़ोंने कभी ध्यान नहीं दिया। अब स्वराज्य मिला है, आमजनताके जीवनधोरणकी तरफ़ सरकारको ध्यान देना ही चाहिये। हमारे देशके हरएक आदमीकी आमदनीकी औसत बढ़नी ही चाहिये। पांच वर्ष या दस वर्षके बाद औसत आमदनीके आंकड़े निकालने चाहिये।

ऐसी ही, तीसरी परेशानी रोग और उनके उपायोंकी लाचारी है। रोगोंके बारेमें अज्ञानता और वहम, दवादारूका अभाव, सामान्य तन्दुरुस्तीके लिये आवश्यक साधन और सार्वजनिक स्वच्छताका अभाव — इन बातों पर भी परदेशी सरकार जितना चाहिये इतना ध्यान और महत्त्व नहीं देती थी। यह धारा बताती है कि अब इन्हें महत्व देना चाहिये।

मद्यनिषेध, यह हमारे देशका खास प्रयोग है। हमारे देशके लोग दारू पीना और नशा करना धर्मके अनुसार पाप मानते हैं। समाजकी दृष्टिसे यह शरमकी बात है और दुर्गुण है। इसलिये थोड़े ही प्रतिशत लोग इसमें फंसे हुए हैं। वे भी इसको खराब व्यसन समझते हैं। अंग्रेज़ी राज्यके समय इस मान्यतामें कुछ फ़र्क़ पड़ा। अंग्रेज़ोंके समाजमें शराब खराब नहीं मानी जाती। उनको उसका निषेध अच्छा नही लगता। इस मान्यतासे शराबखोरी इस राज्यकालमें ज़्यादा हुई। सुधरे हुए लोग इस आदतका शिकार होने लगे।

अब तो गोरे लोग भी शराबसे होनेवाले नुक़सानोंकी जांच करने लगे हैं। तंदुरुस्तीके लिए शराबकी लत वे भी अच्छी नहीं समझते; इसके अलावा समाजमें जो गुनाह होते हैं उनका संबंध भी शराबके साथ है। ऐसे अनेक कारणोंसे दुनियाके बहुतसे लोग मानने लगे हैं कि मद्यनिषेध अच्छी और ज़रूरी चीज़ है।

हम शराबको धर्मके अनुसार त्याज्य मानते हैं, और उसको पीना शरम समझते हैं, इससे पीनेवालोंकी संख्या प्रमाणमें बहुत कम रही है। फिर भी वे सालमें जो ख़र्च इस पर करते हैं वह करोड़ों रुपये हो जाता है! ग़रीब, बेकार, भूखों मरनेवाली और रोगोंसे सड़नेवाली प्रजा ऐसा अनुचित ख़र्च करे इसका क्या मतलब है? यही ख़र्च उन्हें ग़रीब, बेकार, और बिना जीवन-धोरणका बना देता है। इसके अलावा इससे दिमाग़ बिगड़ता है और रिश्तेदार

दुःखी होते हैं सो अलग। इससे सालों पहले प्रजाने तय किया था कि स्वराज मिलने पर शराबकी बंदी तुरंत ही की जाये।

इस कारण यह धारा स्वराज्यके संविधानमें रखी है।

इस तरह सरकारोंको शराबकी आमदनीकी कमी सहन कर भी शराबबंदी करना उनका र्ज़ बताया गया है। इससे दारूके ज़रिये पैसे कमानेकी बदनियत कोई सरकार रख नहीं सकती। खुद शराब बनवा कर बेचनेका धंधा भी वह (सरकार) नहीं कर सकती; और न किसीको करने ही दे सकती है। जिस तरह संखिया वग़ैरह ज़हर दवाके तौर पर इस्तेमाल किये जा सकते हैं, इसी तरह शराबको भी इस्तेमाल कर सकते हैं, इतना अपवाद रखा गया है।

मद्यनिषेधकी यह आज्ञा हमारे संविधानको विशेषता है। प्रयोगके तौर पर यह प्रयोग दुनियामें बेजोड़ है। हमारी सरकार यह कर बताये तो तो दूसरी प्रजाओंके लिए यह उदाहरणरूप हो जाय। संविधानकी इस धारासे हमारे स्वराजकी क़ीमत बाहरके लोगोंमें बढ़ गई है। इस तरहसे धारा ४७ बहुत क़ीमतो है।

२२

खेती और गोपालन

हमारा देश खेतोप्रधान है। यहाँकी आबादोको बहुत बड़ो संख्या गांवोंमें रहतो है। उसका मुख्य रोज़गार खेती और पशुपालन है। सच पूछा जाय तो यहांका सबसे बड़ा उद्योग खेती और पशुपालन या गोपालन ही है। खेतीसे अनाज, तेलके बीज वग़ैरह मिलते हैं। पशुपालनसे दूध, बैल, चमड़ा वग़ैरह मिलता है। इस उद्योगको अपने पांवों पर खड़ा करना और उसे अच्छी स्थिति पर ले आना यह पहला काम है। मगर यह कठिन भी है; फिर भी उसके पीछे पड़ना ही चाहिये। मद्यनिषेधकी धारा ४७ के बाद धारा ४८ इसी संबंधमें है। उसमें कहा है —

"खेती और पशुपालनको अर्वाचीन और विज्ञानके ढंग पर व्यवस्थित करनेके लिये राज्य प्रयत्न करेगा; और गाय, बछड़े, और दूसरे दूध देनेवाले और भार खींचनेवाले पशुओंकी औलादका रक्षण करना और सुधार करना और उनको क़तल करनेसे रोकनेके लिए राज्य ख़ास प्रयत्न करेगा।"

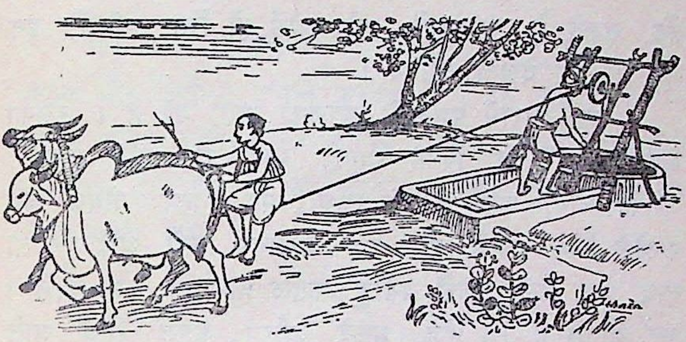

इस धारामें तीन वस्तुओंकी देखभाल करनेके लिये आज्ञा की है :

(१) खेती सुधार

(२) पशुपालन और पशुओंकी नस्लसुधारना

(३) पशुओंके क़तलकी बन्दी

इस धाराकी भाषा बहुत विशाल अर्थवाली है । उसमें किस किस बातका समावेश होगा और किसका नहीं यह कह नहीं सकते । इसका अर्थ यही है कि खेती और पशुपालनकी बाबत यह धारा सामान्य नीति बता देती है । इसके लिये कब, क्या करना यह सरकार समय समय पर सोच ले । खेतीके लिये ट्रैक्टर जैसे यंत्रोंका उपयोग करें? परदेशी या रासायणिक खादका उपयोग करें? बड़े भारी पैमाने पर खेती करनेका इंतिज़ाम किया जाय?—ऐसे अनेक अर्वाचीन और विज्ञान सम्बन्धी सवाल पैदा होते हैं । ये सब परंपरासे चलती आई हमारी खेतीकी प्रणालीमें ठीक

वैठ सकते हैं या नहीं, और बैठें तो किस ढंगमें, इन सब वातोंको देखना चाहिये ।

इसी धारामें पशुओंके क़तलकी वात की है । इसका अर्थ यह करें कि किसी पशुको मार ही नहीं सकते? जैसेकी लोग, इस धाराके आधार पर सदंतर गोवध वंध करनेके लिये कहते हैं । इस धाराका यही अर्थ हो तो गाय, भैंस, बैल, बकरी वग़ैरह क़तल ही नहीं कर सकते । हम जानते हैं कि भेड़, बकरे वग़ैरह क़तल किये जाते हैं; कुछ गायें, बैल, और भैंसे भी काटी जाती हैं ।

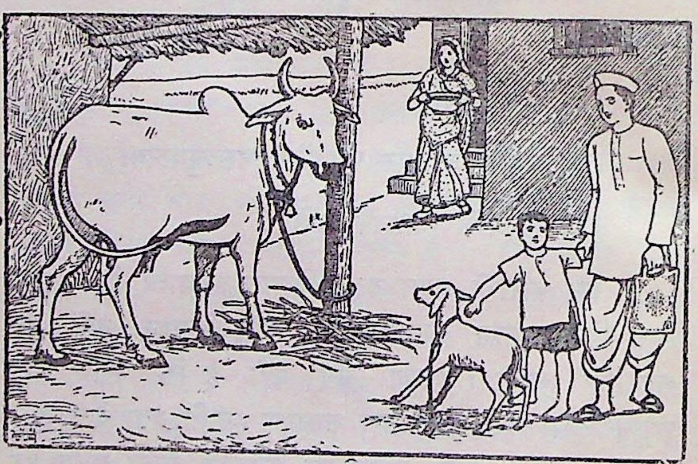

पशुपालन विद्याके तज्ञ कहते हैं कि हमारे देशमें करोड़ों दुवले जानवर हैं, जो चारा वग़ैरह खाते हैं; लेकिन वे आर्थिक रीतिसे हम पर वोझ हैं । इन दुवल पशुओं पर देशका करोड़ों रुपया वरवाद होता है; और देशको चाहिये इतना दूध नहीं मिलता । क्योंकि पशु बहुत कम दूध देते हैं । उनकी नस्लमें सुधार हो तभी यह हालत ठीक हो सकेगी ।

यह धारा राज्योंको आज्ञा करती है कि उनको पशु-पालन और खेतोकी उन्नति करनेके लिये इन सब प्रश्नों पर विचार करके आगे बढ़ना चाहिये। इसमें लोगोंके लिये भी मार्गदर्शन है; उन्हें अपने सहकारसे सरकारके पाससे यह काम करवा लेना है।

२३

प्राचीन वस्तुओंकी रक्षा

भारतके संविधानके चौथे विभागमें, धारा ४९ में कहा है,

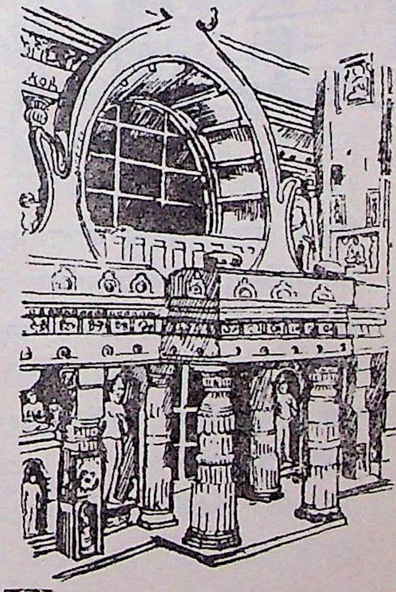

"पार्लमेंट कायदा करके जिस वस्तुको राष्ट्रीय महत्त्वकी ज़ाहिर करे ऐसा हरएक स्मारक या स्थान अथवा कलामय या ऐतिहासिक वस्तुको — खराब करना, कुरूप या अपंग करना, नाश करना, हटाना, बेचना या देशके बाहर भेजना — (जहां जो अर्थ बैठता हो) — इन सब बातोंसे उनका रक्षण करना यह राज्यका फ़र्ज़ होगा।"

हमारा देश बहुत प्राचीन है। अनेक प्रकारकी प्राचीन वस्तुएँ यहां है उनका रक्षण करना चाहिये। अंग्रेज़ोंने इस तरफ़ अच्छी तरहसे ध्यान दिया था। स्वराज्य सरकारको भी इस उपयोगी कामको छोड़ना नहीं चाहिये। देशमें अनेक प्राचीन अवशेष पड़े हैं। एक ख़ास विभागकी ओरसे सरकार उनका रक्षण करती है। यह धारा इस

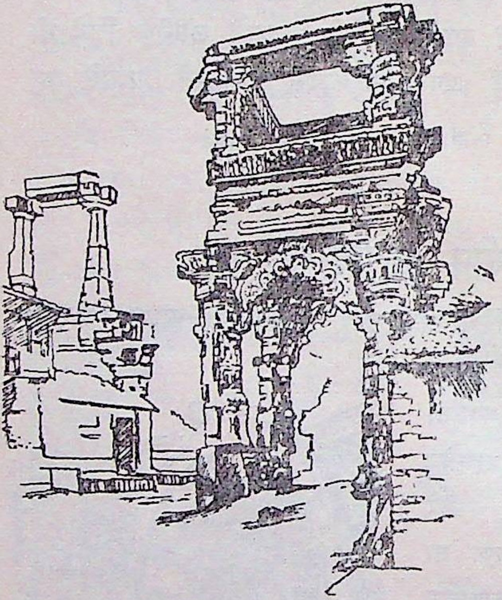

कामको जारी रखनेकी आज्ञा देती है। इस धाराकी रूसे गांधीजीकी राजघाटकी समाधिका एक राष्ट्रीय स्मारकके तौर पर सरकार रक्षण करेगी। जगत प्रख्यात ताजमहलका वह रक्षण करती है। ऐसी अनेक तरहकी वस्तुएँ देशभरमें बिखरी पड़ी हैं, राज्योंको उनकी हिफ़ाज़त करनी चाहिये, यह इस धाराकी आज्ञा है।

२४

अलग अदालती विभाग

राज्यनीतिके आदेशमें धारा ५० में राज्योंको इस तरह आज्ञा दी है :—

" राज्यकी नौकरीमें मुल्की और अदालती विभागको अलग अलग करनेका राज्य इंतज़ाम करेगा । "

इस आज्ञाके पीछे लंबा इतिहास है । अंग्रेज़ी राज्यमें मुल्की और अदालती विभाग अमुक हद तक इकट्ठे थे । जैसे कि, ज़िलेका कलेक्टर, लगान, पुलिस वग़ैरह विभागोंका मुख्य रहता था और ज़िला मेजिस्ट्रेट भी । मतलब यह कि जो पुलिसका ऊपरी वही न्याय करनेवाला । इस तरहसे काम चलता था । यह स्थिति ठीक नहीं है । इसमें शुद्ध न्याय मिलना कठिन है । न्यायके मूल सिद्धांतका ही उसमें रक्षण नहीं है । इससे, काँग्रेस पहलेसे ही इसके खिलाफ़ लड़ती आई है । प्रति वर्ष इसके खिलाफ़ वह प्रस्ताव करती थी । स्वराज्य मिला, तब यह स्थिति अपने आप ठीक होनी चाहिये । लेकिन पुरानी चलती आई चीज़को जल्दीसे ठीक करनेमें कठिनाइयाँ रहती हैं । इसके कारण ही यदि सरकार यह ज़रूरी सुधार करनेमें देरी लगाये तो ? इसी वजहसे संविधान-सभाने उसको स्वयंसिद्ध राजनीतिके आदेशके तौर पर रखा है । जैसे कि शराबकी आमदनीका लोभ भ्रष्ट करता

है इसी तरह सत्ताका लोभ भी आदमीको भुलावेमें डाल दे तो इससे प्रजाके लोकशाही विकासमें बाधा पड़े । यह न हो इसके लिये हो ५० वीं धारा इस मामलेमें ढालरूप है ।

२५

आंतरराष्ट्रीय व्यवहार

भारतके संविधानकी धारा ५१ में राष्ट्र राष्ट्रके बीच व्यवहार के लिये हमारी भारत सरकार किस नीतिके आधार पर काम करे, इस बारेमें आज्ञा दी है ।

वह आज्ञा इस तरह है—

५१. राज्य इन बातोंके लिये प्रयत्न करेगा—

(क) आंतरराष्ट्रीय शांति और सलामतीको बढ़ाना ।

(ख) राष्ट्रोंके बीच न्यायी और स्वमानपूर्वक संबंध रखना ।

(ग) संघठित प्रजाओंके आपसके व्यवहारमें आंतरराष्ट्रीय क़ानूनके लिये, और आपसमें किये हुए क़ौल क़रारोंकी ज़िम्मेदारी पूरा करनेके लिये आदर पैदा करना ।

(घ) मध्यस्थद्वारा आंतरराष्ट्रीय झगड़ोंका फ़ैसला करनेके लिये उत्तेजन देना ।"

हमारा देश स्वतंत्र नहीं था तब दूसरे देशोंके साथ व्यवहार रखने या तोड़नेका काम परदेसी सरकार करती थी । स्वतंत्र होनेसे यह काम अपने आप ही हम पर आ गया है। यह बहुत बड़ी और गंभीर ज़िम्मेदारीका काम है ।

अपने देशके साथ सटे हुए देशोंको अपने पड़ौसी कहा जाय । उनके साथ मीठा संबंध हो, तो अपने देशकी सलामती सुगम हो, आपसमें लड़ाई झगड़ा न हो, बल्कि व्यवहार रोज़गार, लेन देन, दोनों देशोंके लोगोंका आना-जाना वग़ैरह आरामसे हो सके । परिणामस्वरूप दोनों देश सुखी हों, समृद्ध बनें और लोग शांतिसे जीवने गुज़ार सकें ।

पड़ौसी आपसमें न लड़ें, और अच्छे हों तो हमें सुख शांति रहती है, यही बात राष्ट्रोंके लिये है । लेकिन, दुनियाका इतिहास देखा जावे तो देश इस तरहके पड़ौसी धर्मसे बर्ताव नहीं करते । यह देखनेमें आता है कि राज्य बढ़ानेके लोभसे, किसी न किसी बात या विचार या चीज़को लेकर झगड़ा करनेकी वजहसे पड़ौसीराज्य कई बार लड़ाई कर लेते हैं । यह स्थिति किसीके लिये भी अच्छी नहीं । असलमें देखा जाय तो इसमें किसीका भी भला नहीं है। फिर भी युद्ध होते हैं और इतने बड़ेकि उनको देखकर मानव-जातिका सिर चकरा जाये । दुनियाके समझदार आदमियोंने हमेशा राष्ट्र राष्ट्रके बीचका व्यवहार शांतिकी नींवपर चलानेकी सीख दी है और उसके लिये प्रयत्न किया है ।

गांधीजीके प्रतापसे हमारे देशमें इस नीतिके बारेमें हमें अच्छी शिक्षा मिली है । किसी दूसरे देशको बुरी नज़रसे या बदनियतीसे न देखा जाय, लेकिन उसके साथ न्यायपूर्वक और विनयपूर्वक बर्ताव रखा जाये, यही उन्होंने हमें सिखाया है । ऐसे बर्तावसे लड़नेका प्रसंग उपस्थित

नहीं होगा। फिर भी किसी बात पर झगड़ा हो जाये, तो पंचके ज़रिये उसका फ़ैसला कर लिया जाये, लेकिन लड़ाई की नौबत न आये। फिर भी न्यायको देखकर, ईश्वर ऐसा न करे—लड़ना ही पड़े तो अहिंसक युद्धकी रीतिसे लड़नेकी शिक्षा हमें पानी चाहिये, यह भी ज़ज़ौकी सीख थी। मतलब यह है कि गांधीजीने हमारे देशको शांतिका पाठ दिया है।

खुशक़िस्मतीसे दुनियाके देश भी, विज्ञानकी मददसे लड़कर युद्धोंके अनुभव ले ले कर, यही पाठ सीखे हैं। और वे भी शांति रखना, यह आंतरराष्ट्रीय राज्यनीतिका मुख्य सूत्र मानते हैं।

इसलिये हमारे देशके संविधानमें ही शांति और युद्धनिषेधकी नीति रखी गई है। इसलिये कोई भी सरकार इस नीतिकी उपेक्षा करके नहीं चल सकती। युद्ध करनेवाली सरकार संविधानसे ग़ैरक़ानूनी बन जायगी।

उपसंहार

संविधानद्वारा भारत सरकारकी दो हुई आज्ञायें इस तरहसे पूरो होती हैं । इस परसे हिंद-स्वराज्य हम कैसा चाहते हैं इसका चित्र मिल जाता है । यह ध्यानमें आ गया होगा कि गांधीजीके बताये हुये रचनाकार्य और शांतिपाठ इसमें आ जाते हैं । इसी तरह भारतके राज्योंको काम करना है, यह संविधानकी आज्ञा है ।

दूसरी तरहसे देखें तो, यह सार निकलता है कि प्रजा अपनी सरकारोंको इस आज्ञाके मुताबिक़ नाप सकती है और सरकार इस मापसे अपनी सफलता नाप सकती है । इसलिये इस तौर पर प्रजामतको तैयार करना चाहिये और लोगों और सरकारको इस तरहसे चलना चाहिये । तभी रामराज्य या सुराज्यकी कल्पना हमारे स्वराज्यमें मूर्त हो सकती है ।

इस तरह, स्वराज्य क्या है, इसका जवाब संविधानने लोगों और सरकारको नज़रमें रखकर दिया है ।

Sri Pratap Singh Library Srinagar.

हमारे दूसरे हिन्दी प्रकाशन

		क़ीमत	डाकखर्च
१.	हिन्दी बालकहानियाँ	०.२५	०.१३
२.	हिन्दी बालपाठावली	०.३७	०.१३
३.	बातचीत — भाग १	०.२५	०.१३
४.	बातचीत — भाग २	०.२५	०.१३
५.	हिन्दी पाठावली — भाग १	०.५६	०.२०
६.	हिन्दी पाठावली — भाग २	१.२५	०.३०
७.	हिन्दी पाठावली — भाग ३	१.५०	०.३५
८.	हिन्दी कहानी-संग्रह — भाग १	०.२५	०.१३
९.	हिन्दी कहानी-संग्रह — भाग २	०.५६	०.२०
१०.	हिन्दी कहानी-संग्रह — भाग ३	०.६२	०.२५
११.	नाटक खेलें	०.३७	०.१३
१२.	संवाद	०.३७	०.१३
१३.	मुनाजाते बेवा (नागरीमें)	०.३१	०.१३
१४.	चुपकी दाद (नागरीमें)	०.१९	०.१३
१५.	आधुनिक हिन्दी कविता	१.००	०.२५
१६.	प्राचीन हिन्दी कविता	१.६२	०.३०
१७.	भूल-सुधार	०.७५	०.२५
१८.	गद्य-संग्रह	२.५०	०.८०
१९.	उर्दू लिपि शिक्षिका	०.६२	०.२५
२०.	हिन्दुस्तानी व्याकरण प्रवेश	०.३७	०.१३
२१.	हिन्दी-गुजराती-कोश	६.००	१.४०
२२.	गुजराती-हिन्दी-कोश	८.००	१.५०

२३.	आंतरभाषा पाठावली भाग – १	०.६२	०.२५
२४.	,, ,, ,, २	०.८७	०.२५
२५.	,, ,, ,, ३	१.००	०.३०
२६.	,, ,, ,, ४	१.२५	०.३०
२७.	,, ,, ,, ५	१.३१	०.३०
२८.	,, ,, ,, ६	१.३१	०.३०
२९.	शील और सदाचार	०.३१	०.१३
३०.	जानने जैसी बातें	०.५०	०.१३
३१.	जंगलमें मंगल	०.४०	०.१३
३२.	गुलीवरकी मुसाफिरी ('गुलीवर्स ट्रावेल्स' का सार)	०.२५	०.०५
३३.	दंड और दया ('लॉ मिज़रेबल' का सार)	०.५०	०.१३
३४.	वैर और अविचार	०.५०	०.१३
३५.	शेख सादीकी बोधकथाएँ	०.५०	०.१३
३६.	बोधक कहानियाँ	०.८५	०.२०
३७.	बड़े आदमियोंकी बातें	१.००	०.१५

मिलनेका पता : **नवजीवन ट्रस्ट**
पो० नवजीवन
अहमदाबाद–१४